भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक—साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १५ अंक : ४२

सोमवार २१ जुलाई, '६९

अन्य पृष्ठों पर

पार्टियों पर पाबन्दी—सुरेशराम भाई ५१४

दुर्योधन का दरबार

बंगलूर का धमाका —सम्पादकीय ५१५

ग्रामदान : हरिजन और.... —विनोबा ५१६

तरुण सामाजिक क्रान्ति और निर्माण की शक्ति बनें —जयप्रकाश नारायण ५१८

जयप्रकाश बाबू की परेशानी और.... —अनिकेत ५२०

अमर शहीद श्री देव 'सुमन' —सुन्दरलाल बहुगुणा ५२२

बिहारदान की चुनौती.... —राही ५२५

आन्दोलन के समाचार ५२६

पूँजीवादी अर्थशास्त्र में श्रम को क्रय-विक्रय की वस्तु माना गया है। इसलिए मजदूरी इस मानवीय वस्तु की कीमत के रूप में सामने आती है। उसमें मानवता के मूलभूत विचारों से कोई सम्बन्ध नहीं होता। एक उद्योगपति जिस भावना से फौलाद की मशीनें खरीदता है, उसी भावना से मानव-श्रम को खरीदता है। शोषण की यही प्रणाली है, और जबतक मानव-श्रम एक जड़ वस्तु समझा जायगा, तबतक वह प्रणाली बदली नहीं जा सकती।

—जे० सी० कुमारप्पा

सम्पादक
राजमूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी-१, उत्तर प्रदेश
फोन : ७८८५

असहकार का अमोघ अस्त्र

अगर मैं पूँजीपति और मजदूर की मूलभूत समानता को मान लेता हूँ जैसा कि मुझे करना चाहिए, तो मुझे पूँजीपति के विनाश का लक्ष्य नहीं रखना चाहिए। मुझे उसके हृदय-परिवर्तन की कोशिश करनी चाहिए। मेरे असहयोग से उसकी आँखें खुल जायँगी और वह अपने अन्याय को समझ लेगा। यह आसानी से प्रत्यक्ष सिद्ध किया जा सकता है कि पूँजीपति के विनाश का परिणाम अन्त में मजदूर का विनाश ही होगा; और जिस तरह कोई इतना बुरा नहीं होता कि कभी सुधर ही न सके, उसी तरह कोई मनुष्य पूर्ण भी नहीं होता कि जिसे वह भूल से बिलकुल बुरा मान लेता है, उसका नाश उसके हाथों उचित ठहराया जा सके।[१]

अंग्रेजी में एक बड़ा शक्तिशाली शब्द है और वह फ्रेंच में भी है; संसार की सभी भाषाओं में है—वह शब्द है 'नहीं'; और हमें जो रहस्य हाथ लगा है वह यह कि जब पूँजीपति चाहते हैं कि मजदूर 'हाँ' कहें तब मजदूर उच्च स्वर से 'नहीं' चिल्लाते हैं, अगर वे 'नहीं' कहना चाहते हैं। ज्योंही मजदूरों को यह ज्ञान हो जाता है कि वे जब चाहें तब 'हाँ' और जब चाहें तब 'नहीं' कह सकते हैं, त्योंही वे पूँजीपति के पंजे से मुक्त हो जाते हैं। और पूँजीपति को उन्हें मानना पड़ता है। पूँजीपति के पास तोप बन्दूक और जहरीली गैस हो, तब भी कोई परवाह की बात नहीं। अगर मजदूर अपने 'नहीं' पर अमल करके अपने गौरव को कायम रखें तो पूँजीपति इन सबके होते हुए भी असहाय रहेगा। मजदूरों को बदले में वार करने की जरूरत नहीं होती, बल्कि वे गोलियाँ खाते और जहरीली गैस सहते हुए भी विरोध में डटे रहते हैं और अपने 'नहीं' का आग्रह नहीं छोड़ते। मजदूर क्यों असफल होते हैं, इसका कारण यह है कि पूँजी को असत्य बना देने के बजाय, जैसा मैंने सुझाया है, मजदूर (मैं स्वयं मजदूर की हैसियत से बोल रहा हूँ) स्वयं पूँजी को हथिया लेना चाहते हैं, और ज्यादा बुरे अर्थ में पूँजीपति बन जाना चाहते हैं। इसलिए पूँजीपति जो अच्छी तरह सुरक्षित और संगठित हैं, यह देखकर कि मजदूरों में भी उस पद के कुछ उम्मीदवार हैं, उनमें से कुछ का उपयोग मजदूरों को दबाने में करते हैं। अगर हमपर सचमुच जादू का असर न हो, तो हम सब स्त्री-पुरुष इस अटल सत्य को बिना किसी कठिनाई के समझ और मान लेंगे।[२]

समाज में अमीर लोग गरीबों के सहयोग के बगैर दौलत जमा नहीं कर सकते। यह ज्ञान गरीबों को हो जाय और उनमें फैल जाय, तो वे बलवान बन जायँगे और यह जान जायँगे कि जिन भयंकर असमानताओं के कारण वे भूखभरी के किनारे पहुँच गये हैं, उनसे अहिंसा द्वारा कैसे वे अपने को मुक्त कर सकते हैं।[३]

(१) 'यंग इण्डिया' २६-३-'३१;
(२) 'इण्डियाज केस फॉर स्वराज', पृष्ठ ३६४; (३) 'हरिजन' २५-८-'४०।

मो. क. गांधी

www.vinoba.in

पार्टियों पर पाबन्दी

[श्री सुरेशराम भाई और उनकी लेखनी का नये सिरे से परिचय कराना अनावश्यक है, पाठकगण उनसे लम्बे अर्से से परिचित हैं। आजकल श्री सुरेशराम भाई संगम तीर्थ प्रयाग में रह रहे हैं। इस अंक से हम सामयिक प्रश्नों पर उनकी सुचिन्तित और सचोट टिप्पणी का प्रकाशन 'संगम-तट से' स्तम्भ के अन्तर्गत् शुरू कर रहे हैं। आशा है लेखक और पाठक के बीच का यह चिन्तन-सूत्र सोत्साह जारी रहेगा।—सं०]

देश में हिंसा दिन-दिन बढ़ रही है, जिस पर हर किसी का चिन्तित होना स्वाभाविक है। साथ ही यह भी जरूरी है कि उन कारणों की खोज करनी चाहिए जो उसके लिए जिम्मेदार हैं। लेकिन यह न करके एक आवाज उठी है कि हिंसावाली पार्टियों पर, और विशेषकर कम्युनिस्ट पार्टियों (कम्युनिस्ट पार्टी, मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी और नक्सालबाड़ी या माओवादी कम्युनिस्ट पार्टी) पर पाबन्दी लगा दी जाय। भारत सरकार के गृहमंत्री ने इस मुद्दे पर विचार करने के लिए संसद के विभिन्न पक्षों के नेताओं को दावत दी भी। कम्युनिस्ट मित्रों के उसमें जाने का सवाल ही नहीं था। लेकिन खुशी की बात है कि संयुक्त समाजवादी, प्रजा समाजवादी, इन दोनों पार्टियों ने भी इन्कार कर दिया और जनसंघ ने भी। केवल स्वतंत्र पार्टी के प्रतिनिधि गृहमंत्री से मिलने गये।

सच तो यह है कि भारत सरकार या गृहमंत्री की कल्पना ही दोषपूर्ण और अन्याय-संगत थी। आज के जमाने में कौन-सी सरकार दुनिया में है जो किसी पार्टी को फूलने-फलने से रोक सकती या किसी विचार को बंदिश में रख सकती है? हाँ, लश्करशाही में भले यह संभव हो सके, तो भी कुछ अरसे के लिए ही। लेकिन भारत जैसे देश में, जहाँ का संविधान जनतंत्र पर आधारित है, ऐसा होना हमारे जनतंत्र पर ही कुठाराघात है। इस तरह का विचार ही मन में उठना भारत सरकार की तानाशाही मनोवृत्ति का द्योतक है जो अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है।

फिर, कांग्रेस पार्टी हो या स्वतंत्र, भारत सरकार हो या अन्य कोई और, उन्हें गंभीरता से सोचना चाहिए कि हिंसा-मार्गी पार्टियाँ क्यों पनप रही हैं। अभी फरवरी के मध्यावधि चुनाव में ही बंगाल में मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी को सबसे अधिक सीटें मिलीं और वहाँ की सरकार में उन्हीं का बोलबाला है, तो क्या बात है कि बंगाल की जनता ने माओवादियों के पक्ष में अपना मत डाला और तथाकथित शान्ति या अहिंसा के दावेदार पक्ष जैसे कांग्रेस, स्वतंत्र आदि देखते रह गये?

देश में माओवादी या नक्सालपंथी कम्युनिस्टों की ताकत कैसे बढ़ रही है और हिंसा क्यों फैल रही है? जवाब एक है—यहाँ उत्पादन के साधन, संपत्ति और सत्ता का दिन-दिन केन्द्रीकरण हो रहा है, और वे नीचे बँटने की बजाय ऊपर के गिने-चुने चंद हाथों के कब्जे में चली जा रही हैं। जब देश की विशाल जनसंख्या इन साधनों से वंचित रहेगी और उसका शोषण उत्तरोत्तर बढ़ता रहेगा और आर्थिक व सामाजिक विषमता की खाई ज्यादा चौड़ी होती जायेगी तो जनता जिंदा कैसे रहेगी? या तो वह चंद मुट्ठी भर श्रीमानों की गुलामी स्वीकार करे और जो टुकड़ा वे दें, उस पर सबर करे या फिर अपने अधिकार माँगे। माँग तो की जाती है लेकिन जनतंत्र का कानून उसे दिलाने में असमर्थ है—जमींदारी-खात्मे के और सरकार और काश्तकार के बीच से बिचवइये को मिटाने के कानून बने मगर उनका अमल कहाँ हुआ? उल्टे खेती में पूँजीवाद जोर-शोर के साथ घुसता चला जा रहा है। और 'जंटिलमैन फारमर्स' (साहब-बहादुर-काश्तकार) का एक नया वर्ग खड़ा हो रहा है। वे गाँव-गाँव की आर्थिक नाकेबन्दी कर रहे हैं, जमीनें खरीदते जा रहे हैं, और गाँव के रहने-वालों को लाचार मजदूर की तरह रहने पर मजबूर कर रहे हैं। सरकार यह सारा नाटक चुपचाप देख ही नहीं रही है, बल्कि साहब लोगों की मदद भी दे रही है।

यह सिलसिला कैसे बर्दाश्त किया जा सकता है? इसके खिलाफ हिंसक बगावत का नाम है नक्सालवाड़ी और अहिंसक विद्रोह का नाम है ग्रामदान—लेकिन सरकारी क्षेत्रों में अहिंसा को आदर्शवादी समझा जाता है और सब उसका मजाक बनाने में कोई कसर नहीं उठा रखते। तो यह स्वाभाविक है कि लोगों का आकर्षण हिंसा की तरफ होता है और आये दिन देश में किसी-न-किसी सवाल को लेकर हिंसा होती रहती है। हिंसा की भाषा को सरकार मान्य भी करती है। इसलिए नक्सालवादी कम्युनिस्ट पार्टी या वामपंथी पार्टियों की तरफ लोग खिंचते हैं, उनके उम्मीदवारों को वोट देते हैं और राजसत्ता भी उनके हाथ में सौंपते हैं। ऐसी सूरत में तीनों कम्युनिस्ट पार्टियों या किसी वामपंथी पक्ष को गैर कानूनी ठहराना जनमत को ठुकराने जैसा होगा। वह काम एकदम गलत होगा। जाहिर है कि अगर नासमझी से उनको गैरकानूनी भी करार दे दिया गया तो अन्दर-ही-अन्दर वे खूब बढ़ेंगी, लोकप्रिय बनेंगी और फिर एक दिन जब उन पर से पाबन्दी हटेगी तो चौगुने जोर-शोर से वे हावी हो जायेंगे।

सोचना यह चाहिए कि वामपंथी पार्टियाँ पैदा ही क्यों होती हैं, और जो काम वे करती हैं वह किसकी ताकत से करती हैं? जैसा ऊपर बताया गया उनकी बुनियाद में देश की आर्थिक व सामाजिक विषमता है। और, कांग्रेस को यह चाहिए कि पहले इसे जड़मूल से नष्ट करे और फिर किसी पार्टी पर पाबन्दी लगाने का स्वप्न देखे। —सुरेशराम

महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल का अधिवेशन

आगामी १,२ और ३ अगस्त को जलगाँव जिले के एरंडोल नामक कस्बे में महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल का अधिवेशन होने जा रहा है। अधिवेशन में ग्रामदान आन्दोलन के अन्तर्गत "महाराष्ट्र-दान" पर व्यापक विचार होगा। इस सम्मेलन में महाराष्ट्र सर्वोदय मण्डल के वर्तमान अध्यक्ष प्रो० ठाकुरदास बंग के स्थान पर नवीन अध्यक्ष का चुनाव भी होगा।•

www.vinoba.in

दुर्योधन का दरबार

जब श्री जयप्रकाशजी हमारे गाँवों की तुलना दुर्योधन के दरबार से करते हैं तो उनके मन की वेदना और रोष, दोनों एक साथ प्रकट होते हैं। गाँव में कोई भी अनीति हो, कैसा भी अन्याय हो, भीष्म की तरह गाँव के 'सज्जन' सब देखते बैठे रहते हैं। कभी भीरु बनकर वे यह सोचते हैं कि जुल्म करनेवाला शहजोर है, गुण्डा है, कौन जाय उससे बैर मोल लेने; कभी यह जानकर कि अन्यायी उनके ही वर्ग या जाति का है उनके मन में उसके साथ पक्षपात भी होता है, भले ही जिस पर अन्याय हो रहा है उसका पक्ष सही और सच्चा हो। वर्गगत शोषण और जातिगत दमन गाँव के जीवन के ताने-बाने में है। कौन किसको अन्यायी कहे, और क्यों कहे? क्योंकि आगे-पीछे सभी को अनीति और अन्याय के उसी रास्ते पर चलकर पद, पैसा और प्रतिष्ठा कमानी है। इतना ही नहीं, अपनी तरह-तरह की दूसरी लिप्साएँ भी इसी तरह तृप्त करनी हैं। सवर्ण हरिजन की लड़की या बहू के साथ व्यभिचार करेगा, बलात्कार करेगा, लेकिन कोई भी सज्जन आवाज नहीं उठायेगा, बल्कि कई बार उसका मूक समर्थन करेगा। यह है हमारा समाज और उसका जीवन।

शोषण और दमन करनेवाले कौन हैं? जमीन के मालिक हैं; गाँव के महाजन हैं; पंचायत के पदाधिकारी हैं; स्कूल के मैनेजर हैं; कोआपरेटिव के डाइरेक्टर हैं; पुलिस के दोस्त हैं; किसी राजनैतिक दल के नेता हैं। डंडा, पैसा, अधिकार, कानून, वर्ण, जाति, और वोट आदि की सब शक्तियाँ दमन और शोषण में एक हो गयी हैं। कानून असहाय है। मानवता हारी हुई है।

जे० पी० ने कई बार इस कठोर सत्य की ओर हमारा ध्यान खींचा है कि यह जो खेती में हरी क्रान्ति कही जा रही है उसके द्वारा गाँव के समाज में जबरदस्त पूँजीवाद का संगठन हो रहा है, तथा शहरी और देहाती, दोनों पूँजीवादों का गठबन्धन हो रहा है। प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ दिनोदिन समाज के जीवन में अपनी जड़ें गहरी जमाती जा रही हैं। एक ओर ये शक्तियाँ हैं, और दूसरी ओर इनकी प्रतिक्रिया में उभरनेवाली छिटपुट हिंसा है जो अपने को संगठित करने की कोशिश कर रही है।

जो अपने को 'बुद्धिजीवी' समझता है उसकी दुनिया अलग है। उसने अपने सारे दकियानूसीपन तथा समाज-विरोधी हरकतों को अपने कपड़ों और डिग्रियों के पीछे छिपा रक्खा है। यही उसकी बुद्धि (या दुर्बुद्धि?) है। उसे समस्याओं का पता भी नहीं है; जानने की रुचि या फुर्सत भी नहीं है, समाधान ढूंढ़ने की तो बात ही क्या! उस दिन पुलिस के एक बहुत ऊँचे युवक अधिकारी कह रहे थे कि उन्हें पूरे शहर से जितना सिरदर्द है उतना अकेले हाल में स्थापित नये विश्वविद्यालय से है। एक ऐसे युवक पर डकैती के अपराध में उन्हें मुकदमा चलाना पड़ा जिसे इसी साल एम० ए० राजनीति में फर्स्ट डिवीजन मिला है। वह पूछ रहे थे कि क्या वह जिस तरीके से दूकानें लूटता है उसी तरीके से प्रोफेसरों से नम्बर भी ले लेता है?

जे० पी० कहते हैं कि यह ठीक है कि राज्यदान हो चुका तो ग्रामसभाएँ बनेंगी; ग्रामसभाओं से निर्वाचन मण्डल बनेंगे; इस निर्वाचन मण्डलों के द्वारा ग्रामसभाओं के प्रतिनिधि चुनाव में खड़े होंगे और जीतकर राज्य की विधानसभा में जायेंगे, और इस तरह दल समाप्त हो जायेंगे। यह सब होगा, जरूर होगा, लेकिन अगर गाँव-गाँव में दुर्योधन के दरबार लगे ही रहे तो इन दरबारों के सर्वसम्मत प्रतिनिधियों के सरकार में जाने से भी पीड़ित जनता को क्या मुक्ति मिलेगी? घर में घरवाला ही आग लगा दे तो बुझायेगा कौन?

ग्रामस्वराज्य की क्रान्तिकारी शक्ति की परीक्षा गाँवों में ही होनेवाली है। अहिंसा के पास सहकार और प्रतिकार, दोनों की शक्तियाँ हैं। सहकार की शक्ति जगाकर प्रतिकार को अनावश्यक करना हमारी पहली साधना है, लेकिन मुक्ति के लिए आवश्यक प्रतिकार-शक्ति संगठित करना हमारा क्रान्ति-धर्म है।

कानून पंगु है। हिंसा अधूरी है। विरोचित, व्यावहारिक अहिंसा ही अन्तिम सहारा है।

बंगलूर का धमाका

बंगलूर का धमाका दिल्ली को इस तरह हिला देगा, इसकी कल्पना नहीं थी। सत्ता का संघर्ष अब खुलकर सामने आ गया है। लेकिन इस संघर्ष को इस तरह भी देखा जा सकता है कि कांग्रेस अब तरह-तरह के अनाजों की खिचड़ी नहीं रहेगी; अब उसके अनाज शायद साफ-साफ अलग दिखाई दें। ऐसा होना जरूरी भी है। दलीय राजनीति में 'सबको' लेकर चलने का कोई अर्थ नहीं है। दल का अर्थ ही यह होता है कि दल में रहनेवालों को मालूम हो कि वे दल में किसलिए हैं, और जनता को मालूम हो कि कौन दल किसलिए है। कांग्रेस की वैचारिक तसवीर बहुत धूमिल हो गयी थी।

प्रधान मंत्री एक स्पष्ट कार्यक्रम को लेकर देश के सामने आयें, संसद को मनायें, और उसी पर उनका सरकार में रहना-न-रहना निर्भर हो, यह हमारे संसदीय लोकतंत्र के लिए शुभ स्थिति होगी।

कांग्रेस के नेताओं में यह प्रतीति बहुत पहले पैदा हो जानी चाहिए थी कि कांग्रेस देश नहीं है, मात्र दल है, जिसे अतीत के गौरव के अलावा वर्तमान में भी अपना औचित्य सिद्ध करने की नये सिरे से जरूरत है। अब यह स्पष्ट है कि देश एक दल के शासन के युग से निकल चुका। यह दूसरी बात है कि देश को उसकी प्रतिभा और परिस्थिति के अनुरूप लोकतंत्र अभी मिला ही नहीं है। लेकिन जो भी ढाँचा आज है उसमें देश तो सामने रखा जाय! दल देश के लिए है, देश दल के लिए नहीं। देश की जनता प्रधानमंत्री और उसकी सरकार को इसी रूप में देखना चाहती है, भले ही वह संतति हो दल की। देखना है कि दिल्ली इस नाजुक समय दलों के दलदल से कितना ऊपर उठ पाती है। अब तो कांग्रेस को राष्ट्रीय सरकार बनाने की भूमिका तैयार करने में आगे बढ़ना चाहिए।

ग्रामदान : हरिजन और गिरिजन को ऊपर उठाने का आन्दोलन

www.vinoba.in

शक्ति और मुक्ति के लिए छिटपुट नहीं, संगठित प्रयास अनिवार्य

'करो या मरो' की उत्कट भावना से काम में जुट जाने के लिए

—आचार्य विनोबा का प्रेरक उद्बोधन—

किसी मकान को अगर ताला लगा हुआ है और उस मकान में प्रवेश करना है तो ताला तोड़कर जाना पड़ेगा और मजबूत ताला हो तो तोड़ना कठिन होगा। लेकिन अगर ताले की कुंजी हाथ में हो तो मकान में प्रवेश करना आसान हो जायेगा। 'ताला-कुंजी गुरु हमें दीन्हीं, जब चाहे तब खोलो किवड़वा'—हमको गुरु ने ताला-कुंजी दी है इसलिए जब हम चाहते हैं तब एकदम दरवाजा खोल लेते हैं। इस क्षेत्र में ग्रामदान का काम करते हुए आपके इतने दिन गये। अब हमको विश्वास होता है कि यह समय ताला खोलने में नहीं गया है, बल्कि कुंजी खोजने में गया है। अब कुंजी हाथ में आयी है। अब कुंजी खोजने में जितना समय गया उसके साथ इसकी तुलना नहीं हो सकती कि उतना ही समय ताला खोलने में जायेगा। समझने की बात है कि ग्रामदान-आन्दोलन किनके लिए है, यानी मुख्यतया किनके लिए है? ऐसे तो उसका विचार सबका भला हो, यही है। लेकिन सबमें जो पिछड़ा हुआ है, नीचे दबा हुआ है उसके लिए यह आन्दोलन है, यह समझने की जरूरत है। एक परिवार में परिवार के सब लोगों का भला चाहते हैं, फिर भी कोई लड़का बीमार हो, कमजोर हो तो सबका मुख्य ध्यान उस पर होता है। जो कमजोर है उसे पहले मजबूत होना चाहिए। सबका भला समानरूपेण चाहते हैं, लेकिन जो गिरे हुए हैं उनको उठाना, जो डूब रहा है उसको बाहर निकालना, उसकी मदद करना, यह प्रथम काम होता है। हमारे आन्दोलन का मुख्य बिन्दु है सबसे पिछड़े हुए को ऊपर उठाना। इसको संस्कृत में अन्त्योदय कहते हैं। वह उठ गया तो सब अपने आप उठ जाते हैं। यह ध्यान में आ जाय तो पिछड़े हुए लोगों में कौन-कौन हैं यह देख सकते हैं। हरिजन हैं, आदिवासी हैं, भूमिहीन हैं। हमने भूदान में जो जमीन मिली उसका कुछ निश्चित हिस्सा हरिजनों को देने के लिए रख दिया, वैसे ही ग्रामदान में आदिवासी आयेंगे तो जो जमीन उनकी होगी वह आदिवासी भूमिहीनों को ही दी जायेगी। वे हरिजन थे और ये गिरिजन हैं।

आपको यहाँ एक कठिनाई यह आयी होगी कि उत्तर बिहार की मिट्टी में पत्थर नहीं, और कांटा नहीं, और पहाड़ का तो सवाल ही नहीं। तो प्रथम आपको मुकाबिला करना पड़ा होगा जंगलों से, पहाड़ों से। यहाँ के गाँव दूर-दूर होते हैं। उधर तो इस गाँव के कुत्ते की आवाज दूसरे गाँव के लोगों को सुनाई देती है और यहाँ तो दो गाँवों के बीच पहाड़ ही आ जाता है। मेरे प्यारे भाइयो, इसलिए इनको कहा 'गिरिजन'। तो हरिजन, और गिरिजन इन दोनों के लिए मुख्यतया यह आन्दोलन चल रहा है। इसमें और जितने जन हैं उनका भला होता है। यह है कुंजी। अगर कहीं यह गलतफहमी हुई कि उधर के लोग इधर आते हैं, और सारी जमीन हड़प लेते हैं, तो अच्छी बात नहीं होगी। उनको समझाना चाहिए कि यह आन्दोलन उनके भले के लिए है। उनको मुक्ति दिलानेवाला, शक्ति दिलानेवाला आन्दोलन है, शक्तिदायी और मुक्तिदायी आन्दोलन।

मुझसे पूछा गया कि आदिवासियों की जो जमीन मिली वह सब आप आदिवासी में बाटेंगे, ऐसी कुछ सुविधा की जाय; तो हमने उसको मंजूर किया है। आदिवासियों की जो जमीन मिलेगी वह तो उनमें बँटनी ही चाहिए और दूसरी जमीन भी उनको मिलनी चाहिए। इस आन्दोलन का यह कार्य है। इसमें कोई भय की बात नहीं है।

अवतार : वीरता और साधुता का समन्वित स्वरूप

दूसरी बात एक भाई ने कही कि यहाँ बिरसा भगवान की चलती है। हमारे लिए यह कोई नयी बात नहीं है। हम यहाँ पहले आ चुके हैं। १५ साल पहले पदयात्रा करते-करते आये थे और सारा क्षेत्र पैदल घूम चुके हैं। उस वक्त हमने यहाँ का काफी अध्ययन किया था। बिरसा भगवान का नाम हमको मालूम हुआ था। आदिवासियों की रीति-रिवाज के बारे में भी हमने पढ़ा था। बिरसा भगवान एक अवतारी पुरुष हो गये। यह छोटी-सी जमात है जिसमें वे जन्मे थे। क्या आदिवासियों में भी अवतार होता है? हाँ, वह होता है। परमेश्वर की यह लीला है—मत्स्यावतार, कच्छपावतार! भगवान तो हर प्राणियों में अवतार लेते हैं। तो मानवों में जो पिछड़े हुए हैं वे उनमें क्यों नहीं अवतार लेंगे? हमको समझना चाहिए कि अवतार भले ही किसी कौम में पैदा होते हों, लेकिन वे कौम के नहीं होते, सब दुनिया के होते हैं।

कबीर हो गये। उनका जन्म किस कौम में हुआ, सवाल ही नहीं रहा। जब उनकी मृत्यु हुई, तब उनको दफन करना कि दफन, यही सवाल रहा। वे हिन्दू थे कि मुसलमान यही झगड़ा। फिर सब लोगों ने मंजूर किया कि वे हिन्दू भी थे और मुसलमान भी। तो अवतार सबका होता है। अवतार किसी कौम का नहीं होता, भले किसी एक कौम में जन्मा हो। तो बिरसा भगवान हमारे भी हैं। एक वीर पुरुष होता है, और एक सन्त पुरुष होता है। अवतार वह होता है जो वीर और सन्त दोनों होता है। शाहाबाद के कुँवर सिंह वीर पुरुष का नमूना थे। सन्त पुरुष का नमूना हैं तुलसीदास। जिनमें दोनों गुण इकट्ठे होते हैं, वह अवतार होता है। बिरसा भगवान उस कोटि के अवतार हुए। उनकी जमात छोटी थी इसलिए दुनिया भर में ख्याति नहीं गयी। इसलिए हमको उनके वचनों का अध्ययन करना चाहिए। बाबा यह दावा करता है कि उससे उनका अध्ययन

किया है और एक कौम बिलकुल पिछड़ी हुई थी उसमें उन्होंने खमीर का काम किया यह बाबा के ध्यान में आया है। खमीर डालने से आटा फूल जाता है। वैसा उन्होंने अपनी कौम के लिए काम किया है। तो यहाँ उनका चलता है, तो मेरा भी चलता है। यानी उन्हीं का काम मैं कर रहा हूँ।

एक भाई ने मुझे कहा कि वे यहाँ काम कर रहे हैं। आदिवासियों की जो जमीन उनके हाथ से चली गयी है वह वापस लेने का काम वे कर रहे हैं। मैंने उनको कहा कि काम टुकड़े टुकड़े में नहीं होता। अगर मुझे किसी को पकड़ना है और मैं उसकी नाक पकड़ लूँ तो वह मेरे हाथ में नहीं आयेगा। कान पकड़ लूँ तो भी हाथ में नहीं आयेगा। उसके हाथ पकड़ने पड़ेंगे तब वह मेरे काबू में आयेगा। इसलिए जो जमीन गयी वह वापस लेना, केवल इतने से काम नहीं होगा, नयी जमीन लेना, पुरानी जमीन लेना, लोगों में ताकत पैदा करना, यह होगा तब शक्ति खड़ी होगी और गाँव-गाँव की मुक्ति होगी।

ग्रामदान : शक्ति और मुक्ति-आन्दोलन

अब यहाँ क्या स्थिति है? सब टुकड़े-टुकड़े पड़े हैं। आदिवासी, गैर आदिवासी, क्रिश्चियन आदिवासी, और गाँव के बाहर के व्यापारी वगैरह; भिन्न-भिन्न राजनैतिक पार्टी वगैरह के टुकड़े तो हैं ही। इस प्रकार से सब टुकड़े-टुकड़े किये जायँ तो काम नहीं बनता। इस वास्ते गाँव का परिवार बनाओ। गाँव की ताकत बढ़ाओ तो गाँव मुक्ति की ओर बढ़ेगा। फिर गाँव की जो माँग होगी, सब लोगों के द्वारा मिलकर की हुई, उसे सरकार अमान्य नहीं कर सकती। इसलिए हमने इसको नाम दिया शक्ति-आन्दोलन और मुक्ति-आन्दोलन। फिर आप केवल चाहें तो काम हो जायेगा, केवल चाह भर से काम होगा।

अब इस काम के लिए आप लोगों को यहाँ की भाषा सीखनी होगी, नम्र बनना होगा। 'कटु वचन मत बोल, घूँघट का पट खोल।' नम्रतापूर्वक मधुर वचन बोलना चाहिए।

फिर मुझसे कहा गया कि किसी ने ग्रामदान के खिलाफ प्रस्ताव किया है। इससे क्या बनेगा? कोई प्रस्ताव करे जीवन के खिलाफ तो उससे क्या बननेवाला है? यह नासमझी की बात है। इसीलिए वे ग्रामदान के खिलाफ हैं। उनको समझाना चाहिए कि इसके बिना गाँव खड़ा नहीं होगा। इसलिए बाबा आदिवासी, गैर आदिवासी, सबकी ताकत खड़ी करना चाहता है।

ताकत खड़ी करने के तीन रास्ते हैं—एक रास्ता है कानून का। लेकिन उससे काम कितना बन सकता है, यह हम देख रहे हैं। बिहार में तो खेल चल रहा है। मध्यावधि चुनाव के बाद एक मंत्रिमण्डल आया, कुछ दिन रहा चला गया। दूसरा आया वह तो नव-रात्रि, नौ दिन रहा और चला गया। यह तो क्रिकेट का खेल चल रहा है। कभी बॉल इधर तो कभी उधर। इसलिए आज जनता को कानूनी तरीके से मदद मिलेगी, यह आशा हो तो आज की परिस्थिति को आपने पहचाना नहीं और आपकी मृग जलवत् आकांक्षा है। आज तो सरकार वचन देते चली जाती है। 'वचने का दरिद्रता' वचन देने में क्यों दरिद्र होना चाहिए। पालन करने का तो सवाल ही नहीं आता, इसलिए वचन देने में दरिद्र नहीं होना चाहिए, तो देते चले जाओ।

क्रान्ति का एक ही मार्ग

कल हमने अखबार में पढ़ा कि भारत सरकार के खाद्यमंत्री ने कहा है कि हमें दो साल के बाद अनाज बाहर से नहीं मँगवाना पड़ेगा और इतना ही नहीं हम बाहर के लोगों के लिए भेज भी सकेंगे। यह गर्जना तो सन् १९५१ में भी सुनी थी। आज सन् १९६९ है। १८ साल में लोगों को खाने के लिए भी अनाज नहीं है और अब आप कह रहे हैं कि दो साल में बाहर भेजने तक अनाज हो जायेगा। प्यारे भाइयो, ऊपर के वादे से कुछ होनेवाला नहीं है और कानून से कुछ होगा, यह आशा करना व्यर्थ है। तो यह एक कानून का रास्ता हुआ।

दूसरा रास्ता कत्ल का है। अगर कत्ल का रास्ता मदद करेगा, ऐसा हम समझते हैं, आदिवासी या हरिजन ऐसा समझते हैं, तो वह बिलकुल बेवकूफी होगी। इनके पास क्या शस्त्र होते हैं? नक्सालबाड़ी वालों को हमने यह बात समझायी थी। आपके पास तीर-धनुष होता है। तीर-धनुष लेकर क्रान्ति हो सकती थी रामचन्द्र के युग में। क्योंकि उनके पास धनुष-बाण थे और दूसरों के पास वे नहीं थे। वह त्रेता युग की बात थी। आज तो 'एटमिक एनर्जी' मिली है। तरह-तरह के साधन उपलब्ध हैं और आपने सरकार चुनकर उसको मिलीटरी रखने का अधिकार दिया हुआ है। इसलिए आप धनुष-बाण लेकर कुछ करेंगे तो मिलीटरी आयेगी और आपको खतम करेगी। अब नक्सालबाड़ी की बात करते हैं। नाम ही अगर लेना हो तो माओ का लो, लेनिन का लो। माओ या लेनिन का नाम लेते हैं, तो समझ सकता हूँ। लेकिन नक्सालबाड़ी में क्या किया? कुछ छिटफुट खून बहाया, क्रान्ति नहीं हुई। इसलिए मैं कहता हूँ कि हिन्दुस्तान में खूनी क्रान्ति नहीं होगी। इसी तरह अगर खून, मारा-मारी चलता रहे तो क्रान्ति तो होगी नहीं, लेकिन देश कमजोर होगा। उस हालत में परदेश को आक्रमण करना आसान होगा। ऐसी स्थिति में ये छोटी-छोटी कौमें क्या कर पायेंगी?

इसलिए तीसरा रास्ता करुणा का है। गाँव का परिवार बनायें। और परिवार बनाकर देश को मजबूत करें। गाँव का परिवार बनाकर अगर माँग करते हैं तो उस माँग की मुखालिफत होगी नहीं।

मैं जानता हूँ कि आपलोग काफी दिनों से इस क्षेत्र में आकर काम में लगे हैं। घर की याद आती होगी। खेत बोने के दिन आये हैं। लेकिन मैं आपको खबरदार करना चाहता हूँ कि हमारी यह शान्तिसेना है, तो हमें यह काम पूरा करके ही वापस जाना है। गुरुदेव का गीत है—'अमादेर यात्रा होलो शुरू होगो कर्णधार, फिरबो नाहको आर,' बापू ने कहा था—डू आर डाई'। ऐसा मंत्र सामने आता है तो मनुष्य को ताकत आती है। अभी हमें और तकलीफ भोगनी है। तकलीफ भोगनी है ऐसा दर्शन हुआ तो उत्साह होना चाहिए। अब तक तो→

तरुण शांतिसेना

तरुण सामाजिक क्रान्ति और निर्माण की शक्ति बनें

[गत २२ से २६ जून तक बिहार के दरभंगा जिला स्थित पूसा रोड में बिहार के अध्यापकों, प्राध्यापकों, आचार्यों का शिविर तरुण शान्तिसेना को संगठित और संचालित करने का प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से बिहार शान्तिसेना समिति द्वारा आयोजित हुआ था। उस शिविर का उद्घाटन करते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने तरुण शान्तिसेना के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला। प्रस्तुत लेख उनके उक्त भाषण पर ही आधारित है। इससे तरुण साथियों को अपनी दिशा निर्धारित करने में मदद मिलेगी। —हमराही]

तरुण शान्तिसेना आज एक छोटी-सी संस्था है, लेकिन हम आशा जरूर करते हैं कि जल्द ही यह संस्था देश के हर महाविद्यालय और विद्यालय में स्थापित हो जायगी और उसमें हजारों नहीं, लाखों सैनिक हो जायेंगे। इस संस्था के लिए जो बड़े और मोटे उद्देश्य हैं, वे चार हैं ऐसा मानिए :—१. राष्ट्र की एकता, २. सर्वधर्म समादर और समानता, ३. लोकतंत्र की पुष्टि, ४. विश्वशान्ति।

चरित्र की शक्ति

इसके लिए पहला कार्यक्रम है तरुणों में चरित्र का विकास करना, उनमें नेतृत्व की शक्ति पैदा करना, उनमें यह क्षमता पैदा करना कि सम्मिलित रूप से वे काम कर सकें। तरुण शान्तिसेना के संचालक, उसके प्रशिक्षक इस योग्यता के हों, इस चरित्र के हों, स्वयं उनमें यह गुण हो चरित्र का, लोगों को इकट्ठा करके साथ मिलकर काम करने का, तो मैं मानता हूँ कि जिन तरुणों को हम इस सेना में इकट्ठा करेंगे, उन सबमें इस प्रकार के गुण हम पैदा कर सकते हैं। अपने देश में हम लोगों की एक बुराई है कि हम भाषण बहुत देते हैं, एक तरफ वक्ता, दूसरी तरफ श्रोता। लेकिन प्राचीन भारत की बात हम जब पढ़ते हैं, तो दूसरी ही बात सामने आती है, खास करके उस काल की जो इतिहास में एक हजार वर्ष का काल था। मेरा मतलब उपनिषद काल से है। उसमें शायद जितना विकास हुआ मनुष्य की बुद्धि का, मनुष्य के मानस का, विचारों का, उतना शायद दुनिया के इतिहास में नहीं हुआ होगा। पास बैठकर के गुरु से चर्चा हो, यह उपनिषद् का शाब्दिक अर्थ है। अगर आपने उपनिषद् देखे होंगे तो उसमें प्रश्नोत्तरी आप बहुत पाये होंगे, जैसे सुकरात की पद्धति थी उस प्रकार की पद्धति उपनिषद् काल में थी। मुझे इस शिविर में भी लगता है, और तरुण शान्तिसेना के सारे शिविरों में, सारे कार्यक्रमों में, लगता है कि ऐसी पद्धति हमें निकालनी होगी ताकि अधिक-से-अधिक युवक भाग ले सकें चर्चाओं में। उसमें उनका जितना विकास होगा, उतना विकास केवल श्रवण से नहीं होगा।

मेरा ख्याल है कि चरित्र के निर्माण में जो सबसे प्रभावशाली तत्त्व है, वह यही है कि जो तरुण समाज का नेता होगा, उसका स्वयं किस प्रकार का चरित्र है, कैसा वह आदर्श पेश करता है। छोटे-बच्चों को भी आप जानते हैं कि उदाहरण का ज्यादा गहरा असर होता है। छोटा बच्चा भी बहुत गहराई से समझ लेता है कि माता-पिता-अभिभावक जो उसे समझाते हैं, उसपर स्वयं आचरण करते हैं कि नहीं। अगर वह देखता है कि वे केवल बात ही करते हैं काम उसके अनुकूल नहीं, तो उस उपदेश का कोई असर उसपर नहीं होता। तो आप इस बात को स्वीकार

जयप्रकाश नारायण

करेंगे कि अगर तरुणों को हम एकत्रित करते हैं, तो पहला उद्देश्य यही होना चाहिए इसके संगठन का कि स्वयं उनका विकास हो और एक दूसरे से उनका सम्बन्ध, सौहार्द्र, सहकार बढ़े और उनके अन्दर नेतृत्व की शक्ति पैदा हो। उनमें विकसित होनी चाहिए भाईचारे की, एकता की भावना। ऐसा नहीं है कि चरित्र के लिए अलग से कोई वर्ग नहीं लिया जायेगा। नीति-शास्त्र की चर्चा हो सकती हैं, आधुनिक समाज में क्या परिस्थिति है, और उन परिस्थितियों में मौजूदा रीति-नीति में क्या परिवर्तन करने की आवश्यकता है, बौद्धिक स्तर पर इसकी चर्चाएँ हो सकती हैं।

धार्मिक उदारता

अपने देश में अनेक धर्म हैं। यह सम्भव है कि जो जिसका धर्म है, उसे वह माने कि हमारा धर्म सबसे अच्छा है। परन्तु साथ-साथ दूसरे धर्मों के प्रति वह आदर रखे, यह तो अवश्य ही होना चाहिए। यह एक सत्य है मानवीय जीवन के लिए। सभी धर्मों में कुछ-न-कुछ तत्त्व हैं। कोई धर्म ऐसा नहीं है जो दावा कर सकता है कि सारा तत्त्व हमारे ही पास है। इस प्रकार से हम अपने धर्म का पालन करें और हमें लगे कि किसी धर्म में कोई अच्छाई है, कोई सत्य है, तो हम उसे ग्रहण भी करें। इससे हम कोई विधर्मी बन जाते हैं, ऐसा नहीं है। हमारे धर्म में जो प्राण था, जो शक्ति थी, जो तेज था, वह आज नहीं है, बाहर का ऊपरी रूप है, कर्मकाण्ड है, दिखावा है। नहीं तो हमारे ये हरिजन भाई किस प्रकार से रह रहे हैं? आज कोई आठ

←कुंजी हाथ में नहीं थी। अब कुंजी हाथ में आ गयी है तो ताला खोलने में देरी नहीं लगनी चाहिए और जितनी देरी लगेगी उतना हम यहाँ रुकेंगे, ऐसा मन में निश्चय होना चाहिए।

—राँची जिलादान-अभियान में लगे मुख्यतः उत्तर बिहार के कार्यकर्ताओं की सभा में किया गया भाषण।
राँची : २-७-'६६

करोड़ की संख्या है उनकी। समाज में उनकी क्या दशा है?

www.vinoba.in

आज हिन्दू धर्म के नाम से जो धर्म प्रचलित है उसके अन्दर उनका स्थान नहीं है। आदिवासी हैं, ये भी दूर हैं हमसे। ईसाई मिशन-वाले किस प्रकार से उनका धर्मान्तर कर रहे हैं? वह कोई धर्म समझाकर कर रहे हैं ऐसी बात नहीं है। हिन्दू धर्म अपनी संकीर्णता के कारण अपना ही नुकसान कर रहा है। वे सब पूछते हैं कि हिन्दू बनेंगे तो कहाँ रखिएगा आप? हम बौद्ध होते हैं, ईसाई होते हैं, मुसलमान होते हैं तब तो बराबरी के दर्जे पर आते हैं! यह थोड़ा विषयान्तर हुआ। लेकिन जानबूझकर यह विषयान्तर इसलिए किया कि जो दुर्बलता हमारे अन्दर आयी है, उसका परिणाम होता है कि हम अपने को दूसरों से बचाने के लिए जाति-प्रथा के नाम पर, छुआछूत के नाम पर, खानपान के नाम पर एक दीवार खड़ी कर लेते हैं, और उसके अन्दर हम घेर लेते हैं अपने को।

लोकतांत्रिक आस्था

जहाँ तक लोकतंत्र की बात है, उसके एक-एक मुद्दे को लेकर के सोचना होगा हमें कि लोकतंत्र को पुष्ट करने के लिए तरुण क्या कर सकते हैं। तरुणों की कोई पार्टी होगी चुनाव लड़ने के लिए, उनकी कोई अलग हुकूमत होगी, कोई शासन खड़ा किया जायेगा, तब लोकतंत्र पुष्ट होगा या तरुणों को अमुक पार्टी में भरती होना होगा, क्या करना होगा, यह समझने की जरूरत है। आज तो वर्तमान जो परिस्थिति है अपने देश की, और खासकर बिहार की, यह समस्या बहुत महत्व की हो गयी है। सन् '६७ के बाद से अपने देश में जो लोकतंत्र है उसकी नौका बिलकुल डाँवाडोल है। कब डूब जायेगी, कहना मुश्किल है। इस हालत में अगर यह सन्देह पैदा हो कि इसका भविष्य और भी धूमिल है, खतरे में है, तो यह कोई सन्देह बेबुनियाद तो नहीं होगा! बहुत से पढ़े-लिखे लोग, आप जैसे शिक्षक कालेज के, स्कूल के तथा दूसरे लोग कहते हैं, "साहब अब राजनीति पर हमारा विश्वास नहीं रहा, इस चुनाव पर हमारा विश्वास नहीं रहा, लोकतंत्र की पद्धति पर विश्वास नहीं रहा।" तो किस पर विश्वास है? भगवान ने बुद्धि दी है तो सोचना चाहिए न कि इसका कोई विकल्प है, कैसा विकल्प है, क्या है? और तरुण नहीं सोचेंगे तो कौन सोचेगा? अगर तरुण नहीं सोचेगा तो क्या होगा? डिक्टेटरशिप (तानाशाही) होगी। आपने देखा तानाशाह अपने बगल में था उसका क्या परिणाम हुआ? जनता का विद्रोह हुआ तो गद्दी छोड़नी पड़ी। बहुत से लोग कहते हैं कि लोकतंत्र में भ्रष्टाचार होता है। अब अयूब खाँ साहब के जाने के बाद उनकी पार्टी के लोगों ने उनपर आरोप लगाया है कि दो करोड़ रुपये का हिसाब देना है आपको। दो करोड़ रुपया किधर गया मालूम नहीं है। दुनिया के किस देश में तानाशाह है, जिसने की बहुत कुछ कर लिया? सुकर्णो था, क्या उसका हुआ? अनक्रूमा था उसका क्या हश्र हुआ? ईराक में कितने आये और गये। नासिर की स्थिति भी डाँवाडोल है, न जाने क्या होगा। इस्तीफा नहीं दिया होता, तो शायद और भी ज्यादा विरोध उनका हुआ होता। तो इस पर हमें बहुत गम्भीरता से विचार करना पड़ेगा।

विश्वशान्ति

विश्वशान्ति एक ऐसा लक्ष्य है, जिसके बारे में आज विवाद नहीं है। अभी अखिल भारतीय तरुण-शान्तिसेना का सम्मेलन हुआ। उस सम्मेलन का उद्घाटन किया गुजरात विश्वविद्यालय के उपकुलपति ने। उन्होंने कहा कि आइंस्टीन ने ऐसा कहा है कि मुझे नहीं मालूम तीसरा विश्व-युद्ध किस प्रकार का होगा, (शायद ऐसा होगा जिसमें मनुष्य चूहों की तरह मरेंगे) लेकिन हमें मालूम है कि चौथा विश्वयुद्ध किस प्रकार का होगा। इस बारे में हमें कोई संशय नहीं है। और कहा उन्होंने कि चौथा विश्व-युद्ध होगा ऐसा जिसमें लोग लड़ेंगे मुक्कों से और लाठियों से; यानी अगर तृतीय विश्व-युद्ध हुआ तो इस सारी सभ्यता का, और मानव-सृष्टि का सर्वनाश हो जायगा। मानव-समाज हजारों वर्ष पीछे चला जायगा। इसलिए विश्वशान्ति कोई ऐसी एक वस्तु है, या कोई ऐसा एक उद्देश्य है जिसे कुछ पागल लोग, जो अहिंसा को मानते हैं, उन्हीं का ध्येय है, ऐसा नहीं। दुनिया का आज कोई राष्ट्र ऐसा नहीं जिसका राष्ट्राध्यक्ष या प्रधान-मंत्री यह नहीं कह रहा है कि हम विश्व-शान्ति चाहते हैं। संयुक्तराष्ट्र संघ बना ही इसलिए कि दुनिया में कहीं भी आग लगती है, तो सबको यह भय होता है कि यह चिनगारी फैल जायगी, सारी दुनिया में। उसको बुझाने का सारा प्रयास होता है। चाहे कोरिया हो, कांगो हो, कश्मीर हो, पश्चिम एशिया हो, चाहे वियतनाम हो, सब लोग मिलकर इस आग को बुझाने का प्रयत्न करते हैं। क्योंकि सबको भय है कि अब युद्ध को एक क्षेत्र में सीमित करना कठिन है।

पश्चिमी तरुणों का विद्रोह

सारा जो विद्रोह हुआ है अमेरिका में तरुणों और तरुण शिक्षकों का, उसके पीछे जो सबसे बड़ी प्रेरणा थी, वह वियतनाम-युद्ध की थी। राष्ट्रपति जानसन को गद्दी छोड़नी पड़ी। उन्हें एलान करना पड़ा कि मैं खड़ा नहीं होऊँगा अगले चुनाव में। आप देख रहे हैं कि श्री निक्सन ने घोषणा की है, कि वियतनाम से धीरे-धीरे अपने सैनिकों को वापस बुलायेंगे। अबतक ३० हजार वापिस करने का तय किया है और हाल में ही कहा है कि जो समय निर्धारित था, उससे पहले ही हम हटा लेंगे। तो युद्ध अब वैसा नहीं रहा जैसा पहले का था। इसलिए आज लोग गांधीजी के भक्त हो गये हैं, ईसामसीह के भक्त हो गये हैं, बुद्ध भगवान के भक्त हो गये हैं, ऐसी बात नहीं है। बौद्ध भी हैं, और हिन्दू या भारतीय भी हैं जो गांधीजी को माननेवाले हैं, और ईसाई भी हैं, जिनके हृदय में अभी वे सब बातें मौजूद हैं जिनसे युद्ध पैदा होता है, हृदय में भी, मानस में भी। युद्ध तो हमारे दिमाग में घुसा हुआ है, जो बराबर प्रकट होता रहता है। वह जो पशु हमारे अन्दर बैठा है, काफी प्रबल है। सबको खतरा है कि इस पशु के हाथ में जो हथियार है वह पुराना हथियार नहीं है, सर्वनाशक हथियार है। तो विश्वशान्ति अब सबको मान्य है, चीन को भी मान्य है। इसलिए विश्वशान्ति अब सर्वमान्य है।

ऐसी बात नहीं है कि चीन विश्वशान्ति

नहीं मानता है। विश्वयुद्ध की तैयारी कर रहा है। वह जानता है कि इसका परिणाम क्या होगा। इसीलिए एक हद तक वह लड़ाई ठानता है, लेकिन उसके आगे वह नहीं जाता। रावण की तरह एक हद तक वह आगे बढ़ता है। वियतनाम के बारे में इतना उछल-कूद उसने किया, लेकिन कम-से-कम मदद की है वियतनाम की। रूस से भी झगड़ा है, अमेरिका से झगड़ा है। बातों में तो वह झगड़ता है, बहुत गालियाँ बकता है, लेकिन वास्तव में काम में भयभीत है। लेकिन दुनिया में उसका जो स्थान है वह 'पावर' ही नहीं 'सुपर पावर' के रूप में है, इस बात को वह स्थापित करना चाहता है और लगभग वह बात स्थापित हो चुकी है। तो सब यह मानते हैं कि विश्वशान्ति होनी चाहिए। इधर-उधर आग लगे तो उसको बुझाना चाहिए। अब तरुण शान्तिसेना इस विश्वशान्ति को नजदीक लाने में, व्यावहारिक करने में क्या मदद कर सकती है? तरुण हमसे पूछते हैं कि यह शान्ति-शान्ति क्या है? हमें रस्सियों में बाँधना चाहते हैं क्या? हम सारे समाज को पलट देना चाहते हैं तो शान्ति के नाम में क्या आप यथास्थितिवाद को प्रश्रय देते हैं?

समग्र सामाजिक क्रान्ति

ऐसी बात नहीं है। मुझे केवल सामाजिक न्याय से संतोष नहीं है। मैं सम्पूर्ण और समग्र सामाजिक क्रान्ति चाहता हूँ। आज समाज में जितनी कुरीतियाँ हैं उनमें आमूल परिवर्तन करना है। लेकिन जाति-प्रथा है तरुणों में, शिक्षकों में, राजनैतिक नेताओं में और लगभग सभी लोगों में। भयंकर जातिवाद है। तरुणों के स्वधर्म में है क्या जातिवाद? बैठता है, तरुणों के स्वधर्म में? उनकी भी दृष्टि सीमित ही रहेगी क्या? इस तरह के छोटे-से घरौंदे में घिरे रहेंगे क्या हमारे तरुण? और हर जाति के तरुण अलग-अलग रहेंगे क्या? जो जाति की कल्पना आज के समाज में है, भावी समाज जिसे हमें बनाना है, उस समाज की कल्पना में भी उस जातिवाद का, जाति की संस्था का स्थान है क्या? आज कोई कहता है कि विवाह की प्रथा में सुधार करना चाहिए? माता-पिता अगर संकोच भी करते हों कि कितना हम पैसा माँगे, कितना हम दहेज माँगे अपने बेटे की शादी के लिए तो बेटा खुद आगे आकर के बोलता है। यह तरुणाई का लक्षण है क्या? ऐसे ही तरुण नया भारत बनायेंगे क्या? और वह भारत कैसा होगा जिस भारत के तरुणों ने शादी के लिए अपनी कीमत रुपयों में तय की हो, और उसकी बीवी के माँ-बाप ने उनको खरीदा हो। वह कैसा समाज बनेगा? वह कोई सुसंस्कृत समाज होगा? भारतीय समाज होगा? तो तरुणों में अगर क्रान्ति-भावना हो और वे समाज की क्रान्ति के लिए साधन बनें तो फिर उनका आचरण कैसा होना चाहिए, दूसरे के साथ उनका बरताव कैसा होना चाहिए? आजकल के तरुणों में बहुत अहम् है। उनका व्यवहार, जो उनसे नीचे के लोग हैं, उनके साथ बराबरी का नहीं होता, सौहार्द्र का नहीं होता। तो तरुण सामाजिक क्रान्ति में कैसे सहायक हों, यह सोचना होगा। केवल जुलूस निकालना, नारे लगाना, गालियाँ देना, उपकुलपति का घेराव करना, तोड़फोड़ करना, बेचारे गरीब बस के कण्डक्टर को मारना-पीटना, परीक्षा-भवन में चोरी कर रहे हों और निरीक्षक ने पकड़ लिया, परीक्षा हाल से निकाल दिया तो दूसरे दिन कहीं मिलकर उसकी ठोकाई कर देगा। क्या यही तरुणाई है? क्या यही क्रान्ति है? क्या इससे कोई नया भारत बननेवाला है? अगर क्रान्ति की भूख है, और उसका साधन बनना है, तो उसके योग्य बनना होगा।

आखिरी उद्देश्य तरुण शान्तिसेना का है कि शिक्षा-प्रणाली में और शिक्षा के तंत्र में परिवर्तन होना चाहिए। तरुण शान्तिसेना के लोग गम्भीरता से उस पर विचार करें और जो तरुण हैं, विद्यार्थी की हैसियत से उनकी समस्याएँ क्या हैं, उन समस्याओं को समझने की कोशिश करें, और उनको हम दूर करने की चेष्टा करें। अगर ये चार उद्देश्य हम सामने रखते हैं तो देश के नवनिर्माण में तरुणों का सर्वांगीण रूप से योगदान हो सकता है, ऐसा मैं मानता हूँ।•

सम्पादक के नाम चिट्ठी

जयप्रकाश बाबू की परेशानी और हरिभाऊ उपाध्याय तथा गांधीवादियों का दुःख

महोदय,

'भूदान-यज्ञ' के १४ जुलाई '६९ के अंक में पृष्ठ ५०६ पर प्रकाशित 'जयप्रकाश बाबू की परेशानी' शीर्षक श्री हरिभाऊ उपाध्याय का पत्र पढ़ा। श्री हरिभाऊ उपाध्याय के अनुसार क्या गांधीवादी और क्या दूसरे जिम्मेदार भारतीयों को साश्चर्य दुःख; (जिसमें हरिभाऊजी भी निःसन्देश शामिल हैं) जयप्रकाश बाबू की दिल्ली में आयोजित 'गांधी जन्म-शताब्दी उत्सव' में व्यक्त परेशानी (जो वास्तव में उनकी परेशानी नहीं चेतावनी है, और जिसे वे किसी-न-किसी रूप में काफी अर्से से देश के चेतन समुदाय के समक्ष रखते रहे हैं) के कारण हुआ, उसे पढ़कर गांधी-विचार में आस्था रखनेवाले और ग्राम-स्वराज्य के आन्दोलन में एक सिपाही की हैसियत से अपनी शक्ति भर काम करने वाले मुझ कार्यकर्ता को भी कम साश्चर्य दुःख नहीं हुआ। यह पत्र उस दुःख से विकल होकर ही मैं लिख रहा हूँ, आशा है आप इसे प्रकाशित करने की कृपा करेंगे।

मुझे न केवल श्री हरिभाऊ उपाध्याय की अभिव्यक्ति पर हो, बल्कि उनकी भाषा पर भी गहरी आपत्ति है। श्री उपाध्यायजी ने लिखा है,—"क्या गांधीवादी और क्या दूसरे जिम्मेदार भारतीयों को साश्चर्य दुःख हुआ होगा।" मुझे नहीं पता कि देश में और भी कितने ऐसे गांधीवादी और जिम्मेदार भार-

www.vinoba.in

तीय होंगे, जो जयप्रकाश बाबू को गैर गांधीवादी और गैर जिम्मेदार भारतीय इतनी स्पष्टता से मानने को तैयार होंगे ! एक दो बार नहीं सैकड़ों-हजारों बार खुली सभाओं में आचार्य विनोबा ने जाहिर किया है कि आज की परिस्थिति के बजाय खूनी क्रान्ति बाबा पसन्द करेगा। आज जो स्टेटसको (यथास्थिति) है, वह असह्य है। (देखें, 'भूदान-यज्ञ' के १४ जुलाई '६९ के ही पृष्ठ ५०८ पर दूसरा कालम)। मेरा ख्याल है कि श्री उपाध्यायजी की कसौटी पर विनोबा भी पक्के गांधीवादी और जिम्मेदार भारतीय साबित नहीं होंगे। लगभग यही खलबली मची थी इन तथाकथित गांधीवादियों में, जब स्व० श्री किशोरलाल भाई मश्रूवाला ने 'हरिजन' में लिखा था, कि 'पूंजीवाद और साम्यवाद, इन दोनों में से किसी एक को चुनना हो तो मैं साम्यवाद को चुनूंगा।'

गांधी ने अपने जीवन-काल में 'गांधीवाद' नामक किसी चीज से स्पष्ट इन्कार किया था, लेकिन यह इतिहास का तथ्य है कि महान व्यक्तियों के जन-हृदय में पैठे व्यापक और गहरे प्रभाव का भरपूर इस्तेमाल करने से उनके तथाकथित चेले चूकते नहीं। गांधी के बाद से अब तक भारत का शासकीय इतिहास इसका साक्षी है कि गांधी को भी गांधी भक्तों (?) ने इस तथ्य का अपवाद साबित नहीं होने दिया। जग जाहिर गांधी के आखिरी वसीयतनामे को 'हे राम' अंकित काले संगमरमर के एक बड़े टुकड़े से दबाकर प्रार्थना और पूजा कर दो और गांधी की आत्मा से छुट्टी ले लो। सामाजिक तथा आर्थिक क्रान्ति के लिए जिस लोक-शक्ति को सैनिक-शक्ति के विकल्प-रूप में खड़ी करने की उनकी कल्पना और योजना थी, उसके लिए उन्होंने जिन 'प्रतीकों' को चुना था, उन रचनात्मक कार्यक्रमों को उन्होंने गांधी-पूजा के लिए प्रतिमा बना दी, और इस तरह एक लम्बे अर्से तक लोक-चेतना को गुमराह करने में सफल हो गये। लोकशक्ति का प्रतीक, करोड़ों-करोड़ भोली-भाली जनता के हृदय का देवता और अहिंसा का पुजारी स्व०गांधी अपने बलिदान-दिवस पर राजघाट में संगठित सैन्य-शक्ति और तोपों की जब सलामी पाता होगा, तो तथाकथित गांधीवादी कांग्रेसजनों और उनकी सरकार को स्वर्ग से अवश्य ही आशीर्वाद देता होगा, और गोडसे की गोली से विदीर्ण उसका हृदय गर्व से फूल उठता होगा ? धन्य हैं ये गांधीभक्त और अहिंसावादी !

जयप्रकाश बाबू की दुखाभिभूत मनःस्थिति के साथ सहानुभूति प्रगट करते हुए श्री उपाध्यायजी ने प्रश्न उठाया है कि क्या अहिंसा के हार मानने का वक्त आ गया है ? गांधीभक्तों के सामने प्राणों की बाजी लगा कर भारत की समस्याओं को सुलझाने की सलाह देते-देते श्री उपाध्यायजी ने जयप्रकाश बाबू को कष्ट-सहन और स्व-मरण की नेक और शहादत भरी सलाह दी है। क्या भारत में स्व-मरण के संकल्पी अनशनकारियों और आत्मदाह की धमकियों का धमाका पैदा करने वाले 'शहीदों' की आज देश में कमी है, जो उन्होंने यह सलाह पेश करने की कृपा की है ? गांधी ने मंशा व्यक्त की थी कि १२५साल जीऊंगा, भारत में सामाजिक और आर्थिक क्रान्ति के लिए। उन्हें जीने नहीं दिया गया। उनकी शारीरिक हत्या तो बाद में की गयी, उनकी उस भावना की हत्या और पहले ही कर दी गयी थी, जिसे श्री उपाध्यायजी भली प्रकार जानते होंगे। मैं श्री उपाध्यायजी से कैसे यह निवेदन करूं कि आज भारत में क्रान्ति के जीवित शहीदों की आवश्यकता है, और जयप्रकाश बाबू इस देश के जिन्दा शहीदों के सिरताज हैं।...और वे 'करो या मरो' की उत्कट भावना के साथ सामाजिक, आर्थिक और नैतिक क्रान्ति में न जुटे होते, तो जितने प्रतिक्रियावादी प्रहार वे अपनी आत्मशक्ति के बलपर झेल लेते हैं, क्या झेल पाते ? लेकिन जयप्रकाश बाबू का यह व्यक्तित्व पता नहीं क्यों श्री उपाध्यायजी की आंखों से ओझल है, और वे जयप्रकाशजी को कष्ट-सहन की नेक सलाह देने में नहीं चूके हैं।

जयप्रकाश बाबू के भाषणों और वक्तव्यों को पढ़ने पर कोई भी तटस्थ पाठक यह समझ सकता है कि उन्होंने नक्सालपंथी-साम्यवादियों को जनजीवन की असह्य व्यथा को मुखर करनेवाला और जनक्रान्ति के लिए मर-मिटनेवाला मानकर उनको उत्कटता के साथ सहानुभूति जाहिर की है, लेकिन साथ-ही-साथ उन्होंने हिंसक क्रान्ति को अधूरी क्रान्ति सिद्ध करते हुए ग्रामदान को Total (समग्र) और Permanent (सतत्) क्रान्ति के रूप में पेश किया है। जयप्रकाश बाबू इतिहास की बेमिसाल मिसाल हैं जिन्होंने सत्ता को नहीं जनता को, और हिंसा को नहीं अहिंसा को क्रान्ति की शक्ति और आधार माना है। इसके लिए फुटकर और टुकड़ों में, अपनी शहादत की भावना मात्र के पोषण के लिए नहीं, समग्र और सतत् क्रान्ति के लिए वर्षों से अपनी शक्ति लगा रहे हैं, और जिस 'कष्ट-सहन' एवं 'मरण' के आयोजन की बात श्री उपाध्यायजी ने कही है, उस मात्र 'कष्ट-सहन' और 'मरण' के नहीं, सामाजिक क्रान्ति के आयोजन में जुटे हैं। हार उन्होंने किसी तरह की मानी हो, इस तरह का कोई लक्षण जयप्रकाश बाबू के जीवन में तो दिखाई नहीं देता। श्री उपाध्यायजी ने आखिर में यह उपदेश दिया है कि सरकार से अपेक्षा न रखें। क्योंकि सरकार जनकल्याण के लिए होती है। उचित बात है। जयप्रकाश बाबू को सरकारी क्रान्ति पर भरोसा होता तो वे भी 'गद्दी' सुशोभित किये होते, कर रहे होते या करने की चेष्टा में प्रयत्नशील होते ! कम-से-कम उनके लिए यह उपदेश तो कोरा उपदेश ही है। जिस जनकल्याण की बात श्री उपाध्यायजी ने कही है वह जिस 'जन' का और जैसा 'कल्याण' इतने वर्षों में हुआ है ? नक्सालबाड़ी उसका ही तो परिणाम है !

अपनी अन्तरवेदना व्यक्त करते हुए मैं अन्त में यही निवेदन करूंगा कि श्री उपाध्यायजी और उनके जैसे गांधीवादी अहिंसा और गांधी के नाम पर देश में शोषण और दमन के रूप में चल रही करोड़ों-करोड़ जनता का रक्त अधिकतर किसी खूबसूरत पर्दे की ओट से चूस लेनेवाली दर्दनाक और भयंकर हिंसा को प्रश्रय न दें। विनोबा, जयप्रकाश की तरह अहिंसक क्रान्ति के आयोजन में जुट जायें, नहीं तो नक्सालवादी इन खूबसूरत पर्दों से गुमराह जनता को इसमें आग लगाने के लिए उभाड़ने में सफल हो जायेंगे, और उसके ताप में हमारे दुःख के आंसू भी सूख जायेंगे।

—अनिकेत

www.vinoba.in

अमर शहीद श्री देव 'सुमन'

'क्या तुम अपने को चाँदी के चंद टुकड़ों के बदले बेच डालोगे ?'—यह था मेरे तरुण मस्तिष्क में हलचल पैदा करनेवाला श्री देव 'सुमन' का छोटा-सा सवाल, जो उन्होंने ३० वर्ष पहले मुझसे पूछा था। यही सवाल उन्होंने कई तरुणों से पूछा होगा, क्योंकि उस समय तक 'हिमालय की अंधेरी-से-अंधेरी गुफाओं' में रहनेवाले लाखों प्रजाजनों के कानों तक गाँधी का स्वराज्य का संदेश नहीं पहुँचा था। इन रियासतों के शासक अपने को ईश्वर का प्रतिनिधि कहकर भोली-भाली प्रजा पर मनमाने अत्याचार करते थे। टिहरी के राजा 'बोलांदा बद्रीनाथ' (बोलते हुए बद्रीनाथ) कहलाते थे। ऐसी हालत में उनकी मनमानी के विरुद्ध प्रजा का संगठन राजद्रोह माना जाता था। बड़े लोग बागी 'सुमन' की बातें नहीं सुनते थे, इसलिए उनके पहले साथी स्कूली लड़के हुए। इन तरुणों ने पुराने मूल्यों और मान्यताओं को ठुकराकर स्वराज्य लिये बिना चैन न लेने के 'सुमन' के संकल्प में साझीदार बनने का निश्चय किया था।

जीवन-यात्रा का आरम्भ

२५ मई सन् १९१५ को टिहरी-गढ़वाल के छोटे से पहाड़ी गाँव जौल में एक सेवा-भावी वैद्यजी के घर जन्म लेकर श्री देव 'सुमन' को बचपन से ही संघर्षमय जीवन बिताना पड़ा था। पिताजी हैजा के रोगियों की सेवा करते-करते स्वयं ही हैजे से ग्रस्त होकर मर गये। फलतः बच्चों का पोषण कठोर परिश्रमी माँ तारादेवी ने बहुत गरीबी में किया। माँ ने 'सुमन' को मिडिल तक की शिक्षा भी दिला दी। सब गरीब गढ़वाली लड़कों की तरह 'सुमन' भी रोजगार की खोज में देहरादून गये। ये नमक-सत्याग्रह के दिन थे। उनके पास पिता की सेवा-भावना और माँ की कठिनाइयों से जूझने की शक्ति की पूँजी थी। स्वयं के पास रियासती शासन के शोषण और उत्पीड़न की कसक को महसूस करनेवाला हृदय था। गांधी का सन्देश सुनते ही, उन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य निश्चित कर लिया, जो आज भी पहाड़ों की घाटियों और चोटियों में इस लोकगीत की धुन में गूंजता है :

"मरि जाणु भलो 'सुमन';
गुलाम नी रणु २"।

(सुमन ! मरना भला है, लेकिन गुलाम नहीं रहना।)

दिल्ली, देहरादून, लाहौर और दूसरे बड़े नगरों में, जहाँ हजारों पर्वतीय जन रोजगार के लिए रहते हैं, 'सुमन' ने उनको संगठित किया। हिमालय सेवा संघ और प्रजामण्डल के संगठनों का जन्म हुआ। हिमालय के देशी राज्यों का अ० भा० देशी राज्य लोक परिषद से सम्बन्ध हुआ और 'सुमन' उसकी स्थायी समिति में इन राज्यों का प्रतिनिधित्व करने लगे। उन्होंने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, महामना मालवीयजी, पंडित नेहरू, पंतजी टण्डनजी और दूसरे नेताओं का प्रेम प्राप्त कर लिया।

दुर्गम मंजिलें

परन्तु हिमालय में सामन्तशाही के अभेद्य दुर्ग के अंदर प्रवेश कैसे किया जाय ? राज्यों के बाहर तो प्रजामण्डल काम कर रहे थे, राज्यों के अन्दर न तो संगठन करने की छूट थी और न कार्यकर्ता ही थे। अतः सत्य और अहिंसा का यह अकेला संदेशवाहक हाथ में चरखा और झोले में किताबें लेकर पहाड़ों की घाटियों और चोटियों की कठिन मंजिलें तय करता जाता था। उसकी छोटी पुस्तकों—हिन्द-स्वराज्य, सर्वोदय, ग्राम-सेवा, रचनात्मक कार्यक्रम, राष्ट्रीय गीत, नवयुवकों से दो बातें—के खरीददार भी स्कूली लड़के ही होते थे। इन यात्राओं में पुलिस छाया की तरह 'सुमन' का पीछा करती रहती थी। यह देखकर उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि एक अँधेरी रात को 'सुमन' एक बीमार हरिजन की झोपड़ी पर उसकी सेवा में तल्लीन हैं !

अपनी स्वतंत्रता पर इस प्रकार की पाबन्दियों का 'सुमनजी' ने विरोध किया। उन्हें टिहरी राज्य से निर्वासित किया गया, परन्तु उन्होंने इस आदेश को भंग करने में गौरव समझा और अंत में पुलिस-अधीक्षक के दफ्तर के बरामदे पर ही अनशन करके बैठ गये और इस तपस्वी के सामने 'बोलांदा बदरीनाथ' को झुकना पड़ा। पुलिस का पहरा हटा लिया गया।

मूल प्रश्न तो नागरिक स्वतंत्रता का था। 'सुमन' की माँग थी कि प्रजा को अपना संगठन बनाने और उत्तरदायी शासन के लिए आन्दोलन करने की छूट होनी चाहिए। सन् १९४२ के तूफानी दिनों में वे बम्बई से राजाओं के लिए 'अंग्रेजों से नाता तोड़ो' का सन्देश लेकर लौटे थे। कुछ अन्य साथियों-सहित गिरफ्तार कर आगरा सेंट्रल जेल में बन्द किये गये। इधर 'सुमन' की कई वर्षों की तपस्या का टिहरी में यह फल हुआ कि सन् '४२ के आन्दोलन में टिहरी की जेल में लगभग चार दर्जन नवयुवक पहुँच गये। जेल के बाहर और भीतर ये अकथनीय दमन के दिन थे।

नवम्बर '४३ में 'सुमनजी' को आगरा सेन्ट्रल जेल से रिहा किया गया। टिहरी के अत्याचारों की कहानी सुनते ही वे दौड़े टिहरी आये, परन्तु अपने गाँव के पास चम्बा में गिरफ्तार कर लिये गये। उन पर जेल के अन्दर चलाया गया राजद्रोह का मुकदमा, दो वर्ष की कैद की सजा और जेल में उनके साथ किये गये अमानवीय अत्याचारों की कहानी तो जग-जाहिर है। जेल में उनको झुकाने के लिए कई कुचक्र रचे गये, परन्तु उनकी दृढ़ संकल्प-शक्ति और अन्तरात्मा की आवाज ने अपने देश और उद्देश्य के लिए प्राणों की बाजी लगाने के लिए उनको तत्पर किया।

अन्तिम लौ

२ मई सन् १९४४ को 'सुमनजी' ने टिहरी-गढ़वाल की जनता के नागरिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए टिहरी जेल में अपना ऐतिहासिक अनशन प्रारम्भ किया। अनशन के दिनों पढ़ने के लिए गीता देने तक की उनकी माँग को ठुकराया गया। उनकी उपवासी देह को कोड़ों की मार, हथकड़ी और पाँवों में ३५ सेर वजन की बेड़ियों से कुचलने का जघन्य कृत्य किया गया, परन्तु इन अत्याचारों ने उनको अधिकाधिक दृढ़ बनाया। टिहरी जेल से बाहर इस ऐतिहासिक अनशन

www.vinoba.in

की किसी को खबर नहीं थी। २५ जुलाई सन् १९४४ को सायंकाल सवा चार बजे वह बेला आ पहुँची, जिसने 'सुमन' को अमर शहीद बना दिया। टिहरी जेल का अस्पताल-वार्ड, जहाँ उन्होंने अपने महान-आदर्शों के लिए नश्वर शरीर को त्याग दिया था, अब जन-सेवकों के लिए तीर्थधाम बन गया है। इस स्थान पर 'सुमनजी' का चित्र, उनका संक्षिप्त परिचय और उनकी अंतिम संगिनी ३५ सेर वजन की लौह-बेड़ियाँ—त्याग और बलिदान का मूक-सन्देश देने के लिए रखी हुई हैं। १३ वर्ष हुए स्व० बाबा राघवदास इस स्थान पर फूट-फूटकर रो पड़े थे।

हिमालय की पुकार

'सुमनजी' को गये २५ वर्ष हो गये हैं। इस बीच में हिमालय की 'अँधेरी-से-अँधेरी गुफाएँ' बिजली के प्रकाश से जगमगाने लगी हैं। सारा हिमालय अन्तरराष्ट्रीय महत्त्व का क्षेत्र बन गया है। उत्तर की ओर से चीन की सेनाएँ हिंसा और वर्ग-संघर्ष के विनाशकारी विचार को लेकर खड़ी हैं। इधर हिम और शीत की चिंता किये बिना सीमा की सुरक्षा के लिए हमारे देश के सूरमा कटिबद्ध हैं। परन्तु चीन के विचार का मुकाबिला कौन करेगा? यह एक जटिल प्रश्न है। हमें अहिंसा, प्रेम और शान्ति से सामाजिक और आर्थिक विषमताओं को दूर करना होगा। यह संतोष का विषय है कि सीमांत जिला उत्तरकाशी, चमोली और पिथौरागढ़ की जनता ने संत विनोबा के ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के विचार को स्वीकार कर इस दिशा में कदम बढ़ाना प्रारम्भ किया है। गाँव-गाँव में ग्राम-स्वराज्य की स्थापना कर, स्वावलम्बन की दिशा में बढ़कर, झगड़ों का गाँव में ही निपटारा कर तथा आपसी सहकार-वृत्ति बढ़ाकर ही हम चीन की चुनौती का उत्तर दे सकते हैं।

सारे देश को गंगा, यमुना, सतलज, व्यास, ब्रह्मपुत्र आदि नदियों के रूप में जीवन-धाराएँ प्रदान करनेवाला हिमालय अपनी उपजाऊ मिट्टी भी बहाकर भेज देता है और हिमालय के गाँव रोजगार के लिए अपने उपजाऊ मस्तिष्कों और हट्टे-कट्टे युवकों को भी मैदानों में भेज देते हैं। बहुमूल्य वनौषधियों, अन्य वन-सम्पदाओं और खनिजों के भण्डार हिमालय की गोद में बसे गाँव दरिद्रता के घर हैं। देश में सबसे कम आमदनी २३ पैसे प्रति व्यक्ति प्रतिदिनवाला जिला टिहरी गढ़वाल ('सुमन' की जन्मभूमि) इसीमें एक है। अन्य पड़ोसी जिलों का भी यही हाल है। दरिद्रता के इस अभिशाप से मुक्ति दिलाने के लिए 'सुमन'-से समर्पित सेवकों की हिमालय को आवश्यकता है। नयी पीढ़ी से 'सुमन' का सवाल है:

"क्या तुम अपने को चाँदी के
चन्द टुकड़ों के बदले बेच डालोगे?"

—सुन्दरलाल बहुगुणा

खादी को जनता के आधार पर खड़ा करना ही एकमात्र विकल्प

सरकारी मदद से खादी समाप्ति की ओर

समझने की बात है कि अलग-अलग रचनात्मक कार्य चल रहे हैं। लेकिन ऐसे काम करनेवालों में से बहुतों को अब उससे अधिक आशा नहीं रही। खादी-वाले तो खादी के नाम से तंग हैं, क्योंकि उनको जनता के आधार से खड़े नहीं करेंगे तो खादी टूट जायेगी और सरकार का आधार दिन-पर-दिन कम होनेवाला है, यह बात उनके ध्यान में आने लगी है। तो उनके सामने बिलकुल समस्या है। मैंने उनको कह रखा है कि जबतक गाँव की जनता को आप खड़ा नहीं करते, और जो भी कार्य हो उसके द्वारा नहीं करते, उनको प्रेरणा नहीं देते, तबतक कोई भी चीज नहीं बनेगी, लोक-हृदय को छूएगी नहीं, उसमें प्राण-संचार नहीं होगा।

लेकिन अब उनको यह कुछ साफ हुआ है। ध्वजा बाबू का पत्र आया है कि खादी के बारे में, उसके मूल स्वरूप के बारे में सोचना होगा। लोगों में चेतना लानी होगी। वह नहीं लायेंगे तो खादी टिकेगी नहीं। यह अनुभव हुआ है, जो सारे रचनात्मक कार्यकर्ताओं को जगा रहा है। उनको सरकार की ओर से थोड़ी मदद मिलती रहती है और वही उनके कार्य को खतम करती है। जबतक सरकार की मदद मिलती है तबतक कार्य चलता है किसी एक व्यक्ति के आधार से, और जब वह मुख्य व्यक्ति खतम होता है तब वह कार्य भी खतम होता है। परम्परा जारी नहीं रहती। अब बिहार में हम जो काम करना चाहते हैं वह यही है कि गाँव-गाँव में बुनियाद बने। उनकी मदद में हम काम कर रहे हैं। उनसे हम सहायता चाहते हैं, ऐसा नहीं। उनके सहाय में, उनकी मदद में हम काम कर रहे हैं, ऐसा होना चाहिए। यह भारी प्रयोग यहाँ शुरू किया गया है। आपलोग उसमें समय देंगे, यह बहुत खुशी की बात है।

खादी-कार्यकर्ताओं से

—विनोबा

राँची : ३-७-'६९

नयी तालीम : विशेषांक

विकासशील भारत की शैक्षिक व्यूहरचना

प्रमुख समाज-शास्त्रियों और शिक्षकों के प्रखर विचारों का सुन्दर संकलन

आकर्षक तिरंगा मुख्य पृष्ठ

आज ही मँगायें

कीमत : इस अंक का १.००

वार्षिक शुल्क : ६ रुपये

सर्व सेवा संघ प्रकाशन,

राजघाट, वाराणसी-१

www.vinoba.in

तत्त्वज्ञान

भगतसिंह, सुखदेव और राजगुरु को दी गयी फांसी तथा गणेश शंकर विद्यार्थी के आत्म-बलिदान के प्रसंगों से क्षुब्ध कराची-कांग्रेस-अधिवेशन के लोगों को सम्बोधित करते हुए २६ मार्च १९३१ को गांधीजी ने कहा था :—

"जो तरुण यह ईमानदारी से समझते हैं कि मैं हिन्दुस्तान का नुकसान कर रहा हूं, उन्हें अधिकार है कि वे यह बात संसार के सामने चिल्ला-चिल्लाकर कहें। पर तलवार के तत्त्वज्ञान को हमेशा के लिए तलाक दे देने के कारण मेरे पास अब केवल प्रेम का ही प्याला बचा है, जो मैं सबको दे रहा हूं। अपने तरुण मित्रों के सामने भी अब मैं यही प्याला पकड़े हुए हूं....।"

उसके बाद का इतिहास साक्षी है कि देश ने तलवार के तत्त्वज्ञान को तलाक देनेवाले गांधी का साथ दिया। साम्राज्य-वाद की नींव हिली, भारत में लोकतंत्र की नींव पड़ी और संसार को मुक्ति का एक नया रास्ता मिला।

संसार आज बन्दूक की नली के तत्त्वज्ञान से और अधिक त्रस्त हुआ है। विनोबा संसार को वही प्रेम का प्याला पिलाकर बन्दूक के तत्त्वज्ञान को तलाक दिलाना चाहता है और देश में सच्चे स्वराज्य की स्थापना के लिए उसने नया रास्ता बताया है।

क्या हम वक्त को पहचानेंगे और महान कार्य में वक्त पर योग देंगे ?

गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति (राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी-समिति)
हुंकलिया भवन, कुन्दीगरों का भैंरू, जयपुर-३ राजस्थान द्वारा प्रसारित।

www.vinoba.in

बिहारदान-अभियान की चुनौती और कार्यकर्ताओं की हिकमत

बाबा ने जब चम्पारण को 'वाटर लू' की संज्ञा दी थी, तो बिहार के एक प्रमुख नेता ने बाबा से कहा था कि 'वाटर लू' चम्पारण नहीं राँची के हो सकने की सम्भावना अधिक है। परिस्थिति की मूल स्थिति की ओर यह संकेत था, और सही था, आज यह बात जाहिर है, लेकिन बाबा ने इसे 'वाटर लू' नहीं माना है। शायद इसलिए कि चट्टान जितनी कड़ी होती है, उसके टूटने पर उतना ही निर्मल जल का स्रोत फूटता है। और राँची में इसकी पूरी सम्भावना है।

राँची मुख्यतः आदिवासी लोगों का जिला है। दूसरे जो गैर-आदिवासी लोग यहाँ हैं : उनके दो ही रूप इनके सामने हैं—शोषक या सेवक के, सेवक ईसाई मिशनवाले, शोषक बिहार या भारत के दूसरे प्रदेशवाले। खादी का काम भी यहाँ के गाँवों में नहीं के बराबर हुआ है, इसलिए बाहर से आये यहाँ ग्रामदान के काम में लगे कार्यकर्ता भी इनके लिए शोषक-वर्ग के ही हैं, इसलिए पहले दौर में तो कार्यकर्ताओं को भ्रमनिवारण की ही कोशिश में लगना पड़ा। तेल के खौलते कड़ाहे में जिन्दा डाल देने से लेकर खून से दाढ़ी रंगने तक की भयभीत करनेवाली धमकियों का हँसते-हँसते सामना करके कार्यकर्ताओं ने प्रतिकूलता को अनुकूलता और अविश्वास को विश्वास में बदलने की जी-तोड़ कोशिश की, जिसका परिणाम हुआ कि राँची का जिला-दान असम्भव मानने की स्थिति नहीं रही।

गत २, ३ जुलाई को मुख्य रूप से उत्तर बिहार से आये कार्यकर्ताओं ने जब राँची शिविर में अपने १ माह के कार्यों का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया तो थकान भले ही किसी-किसी के चेहरे पर दिखाई पड़ी हो, लेकिन निराशा की झलक किसी के चेहरे पर नहीं थी। सबकी आवाज में आत्मविश्वास का बल था और अधिकांश की रिपोर्ट में उत्साहवर्धक उपलब्धियाँ थीं।

इस शिविर की अध्यक्षता करने का निवेदन जब बिहार के बुजुर्ग नेता श्री बैद्यनाथ प्रसाद चौधरी से किया गया तो उन्होंने शिविर के लिए अध्यक्षता को अनावश्यक बताते हुए मध्यस्तता करने की जिम्मेदारी स्वीकार की और सचमुच उन्होंने कार्यकर्ताओं और उनकी समस्याओं के बीच आखिर तक मध्यस्तता की।

शिविर में कार्यकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत प्रतिकूलताओं का आकलन किया तो मुख्य रूप से निम्नलिखित बातें सामने आयीं :

० एक गाँव से दूसरा गाँव बहुत दूर बसा है। जंगली पहाड़ी रास्ते हैं, आने-जाने में ही बहुत वक्त निकल जाता है।

• भाषा भिन्न है, पूर्व परिचय क्षेत्र का नहीं है, इसलिए बातचीत में निकटता नहीं बन पाती।

० यातायात के साधनों का सख्त अभाव है, यहाँ तक कि साइकिल की सवारी भी सब जगह सम्भव नहीं।

० 'दिक्कू' (गैर आदिवासी लोगों के लिए आदिवासियों का सम्बोधक शब्द, जिसका अर्थ होता है 'दिक' यानी तंग करने-वाला) लोगों के प्रति उनके मन में घोर अविश्वास व्याप्त है।

० शंका, अविश्वास की भावना के कारण ठहरने की जगह और भोजन आदि के मिलने में बड़ी कठिनाई होती है।

• पंचायतों, सहकारी समितियों द्वारा लोग ठगे गये हैं, इसलिए हमारे ग्रामदान के सामुदायिक विचार को भी उसी दृष्टि से देखते हैं। पंचायतों, सहकारी समितियों में आदिवासियों का प्रबल बहुमत होते हुए भी इन संस्थाओं पर कब्जा 'दिक्कुओं' का है और अपने फायदे के लिए वे इनका इस्तेमाल करते हैं।

० आदिवासी लोगों की भूमि-व्यवस्था में एक तरह की जमींदारी कायम है। इस व्यवस्था को वे तोड़ना नहीं चाहते। क्योंकि इससे सरकारी हस्तक्षेप सीमित रहता है। उन्हें यह शंका होती है कि ग्रामदान के बाद उनकी यह व्यवस्था टूट जायगी।

० मिशन के लोग चर्चा में विरोध नहीं करते, लेकिन अपनी ओर से सक्रिय भी नहीं होते, जिसका असर उनकी प्रतिकूलता के रूप में पड़ता है।

० आदिवासी लोग विचार को समझ लेते हैं, स्वीकार भी कर लेते हैं, लेकिन अपने नेताओं की स्वीकृति के बिना हस्ताक्षर नहीं करते।

० उनके कुछ उग्रपंथी संगठनों की सहमति अभी तक ग्रामदान-आन्दोलन के लिए प्राप्त नहीं हो सकी है।

• आदिवासियों में भूमिहीनता कम है। इसलिए बीघाकट्टा का नारा उन्हें आकर्षित नहीं करता, उल्टे यह शंका होती है कि ग्रामदान में जो जमीन दान में निकलेगी, उस पर 'दिक्कुओं' को बसाया जायेगा।

कार्यकर्ताओं ने अपनी-अपनी सूझ-बूझ और स्थानीय परिस्थिति के अनुसार इन प्रति-कूलताओं और समस्याओं का हल ढूँढ़ने की कोशिश की। इन कोशिशों में मुख्यरूप से :

• गाँववालों की धमकी और विरोध के बावजूद उन्हें अपनी बात समझाने की लगा-तार कोशिश की, उनके सवालों का जवाब दिया, खाना नहीं मिला तो उपवास करके भी वहीं रहे।

• स्थानीय नेताओं को अपने अनुकूल बनाने के लिए विशेष प्रयत्न किये। उन्हें आन्दोलन की पूरी जानकारी दी।

• जिला स्तर पर प्रमुख लोगों के हस्ताक्षर से ग्रामदान के लिए अपील का पर्चा छपाया गया है, उसे वितरित किया।

• स्थानीय पढ़े-लिखे युवकों को अपना साथी बनाने की कोशिश की।

• उनकी ओर से व्यक्त शंका और अविश्वास के बावजूद अपनी ओर से नम्र और आदरयुक्त व्यवहार रखा।

• ग्रामदान को ग्रामस्वराज्य के रूप में प्रस्तुत किया और इसे गाँव को साहुकारों के शोषण और सरकार के दमन से मुक्ति का मार्ग बताया। यह बात खासतौर पर उनके लिए आकर्षक साबित हुई।

इन प्रयासों का ही परिणाम है कि उस समय तक दो प्रखण्डदान हो चुके थे, दो और लगभग पूरा होने की स्थिति में थे।

जिले के कुल प्रखण्डों में से २२ प्रखण्डों में काम सफलता की राह पर आगे बढ़ने लगा था।

दोनों दिन दोपहर के बाद शिविरार्थियों के बीच बाबा के प्रेरक संक्षिप्त प्रवचन हुए। आखिरी दिन तो उन्होंने हाथ उठाकर कार्यकर्ताओं से काम पूरा होने तक डटे रहने का संकल्प कराया। ऐसे अवसरों पर उनके 'प्यार' की 'फाँस' से अलग हो सकना कठिन होता है।

बाबा ने खुद क्षेत्रों में जाने का कार्यक्रम बनवाया और अब तो उनकी यात्रा शुरू भी हो गयी है।

कार्यकर्ताओं को आदिवासी जीवन का निकट-परिचय दिलाने के लिए स्थानीय जानकार व्यक्तियों को भी शिविर में आमंत्रित किया गया था। बाबा से भी बूढ़े आदिवासी नेता रेवरेन्ड जुवेल लकड़ा ने आदिवासी जीवन का अंतरंग परिचय देते हुए उनके सोचने की दिशा और कोण की भी जानकारी दी।

अनुभवों के आधार पर कार्य की योजना नये सिरे से बनायी गयी। सहयोग में मध्यप्रदेश के भी ८-९ कार्यकर्ता आकर काम में जुट गये हैं। संयोजन के लिए बिहार ग्रामदान प्राप्ति समिति के कार्यालय-सहित समिति के मंत्री श्री वैद्यनाथ बाबू तथा सहमंत्री श्री कैलाश प्रसाद शर्मा राँची में शुरू से ही डटे हुए हैं। —रामचन्द्र 'राही'

रतलाम जिलादान का संकल्प

रतलाम जिले के ६ विकास-खण्ड रतलाम, बजना, सैलाना, पीपलौदा, जावरा और आलोट में विकास खण्डस्तरीय ग्रामदान शिविर सम्पन्न हुए, जिनमें जिले के २,५०० सरपंच, सचिव, ग्रामसेवक, पटवारी, पटेल, समिति सेवक, तथा शिक्षकों को ग्रामदान का विचार समझाया गया और ग्रामदान-प्राप्ति का प्रशिक्षण दिया गया। १४ अगस्त तक जिलादान का सामूहिक संकल्प किया गया। प्रत्येक विकासखण्डों में प्राप्ति-हस्ताक्षर-अभियान प्रारम्भ कर दिया गया है।•

एक हजार पृष्ठों का साहित्य पाँच रुपये में

प्रत्येक हिन्दीभाषी परिवार में बापू की अमर और प्रेरक वाणी पहुँचनी चाहिए। गांधी-वाणी या गांधी-विचार में जीवन-निर्माण, समाज-निर्माण और राष्ट्र-निर्माण की वह शक्ति भरी है, जो हमारी कई पीढ़ियों को प्रेरणा देती रहेगी, नये मूल्यों की ओर अग्रसर करती रहेगी। परिवार में ऐसे साहित्य के पठन, मनन और चिन्तन से वातावरण में नयी सुगन्धि, शान्ति और भाईचारे का निर्माण होगा।

गांधी जन्म-शताब्दी के अवसर पर हम सबकी शक्ति इसमें लगनी चाहिए।

हजार पृष्ठों का आकर्षक चुना हुआ गांधी-विचार-साहित्य पाँच रुपये में हर परिवार में जाय, इसका संयुक्त प्रयास गांधी स्मारक निधि, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान और सर्व सेवा संघ की ओर से हो रहा है। हर संस्था और व्यक्ति, जो गांधी-शताब्दी के कार्य में दिलचस्पी रखते हैं, इस सेट के अधिकाधिक प्रसार-कार्य में सहयोगी होंगे, ऐसी आशा है। इस प्रयास में केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों का सहयोग भी अपेक्षित है।

रं० रा० दिवाकर
अध्यक्ष
गांधी स्मारक निधि, गांधी शान्ति प्रतिष्ठान

उ० न० ढेबर
अध्यक्ष, खादी ग्रामोद्योग कमीशन

विचित्र नारायण शर्मा
उपाध्यक्ष, उ० प्र० गांधी-शताब्दी समिति

एस. जगन्नाथन्
अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

जयप्रकाश नारायण
अध्यक्ष
अ० भा० शान्तिसेना मंडल

राधाकृष्ण बजाज
संचालक, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन

गांधी जन्म-शताब्दी सर्वोदय-साहित्य सेट

पुस्तक	लेखक	पृष्ठ	मूल्य
१. आत्मकथा (संक्षिप्त)	: गांधीजी	२००	१·००
२. बापू-कथा (सन् १९२१-१९४८)	: हरिभाऊ उपाध्याय	२५५	२·००
३. गीता-बोध, मंगल प्रभात	: गांधीजी	१३०	१·२५
४. मेरे सपनों का भारत	: गांधीजी	१७५	१·२५
५. तीसरी शक्ति (सन् १९४८-१९६९)	: विनोबाजी	२४०	२·००
		कुल : १०००	७·५०

आवश्यक जानकारी

१. इस सेट में पाँच पुस्तकें होंगी, जिनका मूल्य ७ से ८ रु० तक होगा। यह पूरा सेट ५) रु० में मिलेगा।
२. इन सेटों की बिक्री २ अक्तूबर के पावन-दिवस से प्रारम्भ होगी।
३. चालीस सेटों का एक बंडल बनेगा। एक बंडल से कम नहीं भेजा जा सकेगा।
४. चालीस या अधिक सेट मँगाने पर प्रति सेट ५० पैसे कमीशन मिलेगा।
(सारे सेट फ्री डिलीवरी यानी निकटतम रेलवे-स्टेशन-पहुँच भेजे जायँगे।)
५. सेटों की अग्रिम बुकिंग १ जुलाई १९६९ से शुरू है। अग्रिम बुकिंग के लिए प्रति सेट रु० २) के हिसाब से अग्रिम भेजने चाहिए। शेष रकम के लिए रेलवे रसीद वी० पी० या बैंक के मार्फत भेजी जायगी।
६. सेटों की रकम तथा आर्डर निम्नलिखित पते से ही भेजें :

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१

अशांत तंजौर में शान्ति-स्थापना का प्रयास

www.vinoba.in

श्री शंकरराव देव की पदयात्रा का दूसरा दौर सम्पन्न

—समस्या के स्थाई समाधान हेतु पंचसूत्री कार्यक्रम—

पूर्व तंजौर में सम्पन्न हुई श्री शंकरराव देव की दूसरी तीन सप्ताह की पदयात्रा के बाद तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल की बैठक अलथमवाड़ी में दिनांक ६-७-'६९ को हुई, जिसमें वहाँ की वर्तमान क्षेत्रीय परिस्थिति पर विचार-विमर्श करके निम्न प्रस्ताव पारित किया गया :

तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल श्री शंकरराव देव के प्रति, तंजौर जिले पर विशेष ध्यान देने के लिए, हार्दिक आभार प्रकट करता है। मार्च और जुलाई '६९ की अवधि में उन्होंने ५७ दिन का समय दिया, और चार प्रखण्डों—किवालुर, मदूकुर, तिरुवारूर, पत्तूकोट्टाई—में ४२ दिनों की पदयात्रा की, और शिविरों में मार्गदर्शन हेतु १५ दिन का समय दिया। इस अवधि में उनको पूर्व तंजौर के मालिक-मजदूरों के बीच विद्यमान तनावपूर्ण स्थिति के बुनियादी कारणों को सूक्ष्मता से परखने का मौका मिला। तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल उनके द्वारा सुझाये गये प्रथम चरण के तौर पर भूस्वामियों और मजदूरों द्वारा तत्काल क्रियान्वित किये जाने लायक निम्न न्यूनतम कार्यक्रमों को पूर्णतः स्वीकार करता है :

(१) हिन्दू समाज की अन्य जातियों की तरह हरिजनों को भी हर स्थान, संस्थान और धन्धों में प्रवेश की खुली छूट होनी चाहिए।

(२) जिस भूमि पर मजदूर का मकान है, उस भूमि पर स्वामित्व का हक उसे अवश्य प्राप्त होना चाहिए।

(३) हिंसा से किसी भी विवाद का निपटारा नहीं हो सकता, इसलिए हर प्रकार की हिंसा पूर्णरूप से बन्द होनी चाहिए। किसी भी पक्ष को एकांगी कदम नहीं उठाना चाहिए। जब भी कोई विवाद पैदा हो, तो सम्बन्धित पक्षों को पंचायती करनी चाहिए और पंच फैसले को मानना चाहिए।

(४) तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल की यह मान्यता है कि एकमात्र ग्रामदान ही भूमि के इस कठिन सवाल का हल प्रस्तुत करता है। जबतक भू-स्वामियों और भूमिहीन मजदूरों के दो अलग-अलग वर्ग रहेंगे, तबतक आपसी सम्बन्धों में इस प्रकार के विवादों का पैदा होना अनिवार्य है। भूमिस्वामित्व स्वेच्छया ग्रामसमाज को हस्तांतरित होनी चाहिए, और भूमि का बीसवाँ भाग भूमिहीनों में वितरित करने के लिए गाँव की ग्रामसभा को दी जानी चाहिए।

(५) हरिजन-समुदाय के आर्थिक और जीवन स्तर की उन्नति के लिए शिक्षण और पूर्ण रोजगार के प्रावधानों के माध्यम से तत्काल प्रयत्न किये जाने चाहिए। तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल महसूस करता है कि इसकी मुख्य जिम्मेदारी पूरे समाज को उठानी चाहिए, खासकर भूमिस्वामियों को।

तमिलनाडु सर्वोदय मण्डल समाज—खासकर मालिकों और मजदूरों से, इस पंचसूत्री कार्यक्रम को स्वीकार करने तथा सम्पूर्ण ग्राम-समुदाय में शान्ति एवं समृद्धि हेतु मालिक मजदूर सम्बन्धों में सौहार्द्रता एवं सामञ्जस्य स्थापित करने के लिए तत्काल इसके क्रियान्वयन में सहकार की अपील करता है। केवल आर्थिक पहलू को निपटाना समस्या का सही समाधान नहीं होगा। इसे समग्र सामाजिक-आर्थिक समस्या मानकर समाधान का प्रयास करने पर ही स्थायी हल शक्य होगा।

मीरजापुर में दो प्रखण्डदान

श्री कृष्णकुमार मिश्र से प्राप्त जानकारी के अनुसार मीरजापुर के लालगंज और हलिया इन दो प्रखण्डों का प्रखण्डदान सम्पन्न हुआ। लालगंज के कुल आबाद गाँव १५९ में से ११९ गाँवों का और हलिया प्रखण्ड के १७७ गाँवों में से १३८ गाँवों का ग्रामदान हुआ।•

मैनपुरी में ग्रामदान-अभियान

उ० प्र० के मैनपुरी जिले की गोगाँव तहसील में तहसीलदान का अभियान प्रारम्भ हुआ, जिसका उद्घाटन जिलाधीश एवं अध्यक्ष जिला गांधी शताब्दी समिति मैनपुरी ने किया। शिविर की अध्यक्षता जिला परिषद् के अध्यक्ष महोदय ने की। शिविर का संचालन डा० दयानिधि पटनायक की देखरेख में हुआ। दिनांक ७-७-'६९ को ६५ टोलियाँ गाँवों में ग्रामदान हेतु गयीं। शिविर में २०० शिविरार्थियों ने भाग लिया।०

सासनी (अलीगढ़) का प्रखण्डदान

प्राप्त सूचना के अनुसार सासनी में हुए ग्रामदान-अभियान में सासनी प्रखण्ड का प्रखण्डदान पूरा हुआ। कुल १४४ राजस्व गाँवों में से १३३ गाँवों का ग्रामदान हुआ।०

गाजीपुर में दो प्रखण्डदान

गाजीपुर जिले के भदौरा और रेवतीपुर दो प्रखण्डों का प्रखण्डदान हुआ। भदौरा के ६३ गाँवों में से ३३ गाँव तथा रेवतीपुर के ९९ गाँवों में से ४३ गाँव प्रखण्डदान में शामिल हैं। गाजीपुर में अबतक कुल ७ प्रखण्डदान हुए हैं।•

साहित्य-प्रचार

श्री फुलिया भगतजी ने जून महीने में ४४ मील की पदयात्रा की। इस दरम्यान उन्होंने ८० रुपये का साहित्य बेचा। ३० गाँवों में सर्वोदय-विचार का प्रचार किया। आप हरियाणा के कार्यकर्ता हैं और सतत साहित्य-प्रचार के कार्य में लगे रहते हैं।०

भिण्ड जिले में ५५१ ग्रामदान

भिण्ड जिलदान-अभियान के अन्तर्गत अब तक जिले में ५५१ ग्रामदान मिल चुके हैं। जिले में कुल ८९० गाँव हैं। चम्बल घाटी शान्ति समिति, गांधी-निधि, भूदान बोर्ड आदि के कार्यकर्तागण सघन ग्रामदान-प्रचार में लगे हुए हैं।•

उज्जैन में ग्रामस्वराज्य शिविर

उज्जैन जिले के ६ विकास खण्डों महिदपुर, बड़नगर, सरोना, घटिया, खाचरोद तथा उज्जैन में ग्रामस्वराज्य शिविर सम्पन्न हुए। इन शिविरों में दो हजार शिविरार्थियों ने भाग लिया।•

www.vinoba.in

महाराष्ट्र के दौरे में श्री जयप्रकाश नारायण को दो लाख बीस हजार रुपये की थैली और नब्बे ग्रामदान समर्पित

हर रोज आमसभा में १५ से २० हजार तक के जनसमूह में ढाई से तीन घंटे का प्रेरक भाषण

वाराणसी : १७ जु०। सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री ठाकुरदास बंग ने गत ८ से १४जुलाई तक हुई श्री जयप्रकाश नारायण की महाराष्ट्र के सात जिलों की तूफानी-यात्रा के सम्बन्ध में जानकारी देते हुए बताया कि महाराष्ट्र की जनता ने इस यात्रा में श्री जयप्रकाश नारायण का हार्दिक स्वागत किया। इस यात्रा में उनको जलगाँव में ३१,०००, बुल्ठाणा में ११,०००, अकोला में ५१,०००, अमरावती में ४१,०००, यवतमाल में २५,०००, चाँदा में ३१,००० और नागपुर में ३०,०००; इस प्रकार कुल २,२०,००० रुपये की थैली और ६० ग्रामदान उन्हें समर्पित किये गये, जिनमें अकोला जिले का वारशीटाकली प्रखण्डदान भी शामिल है।

इस ग्रामस्वराज्य-यात्रा में हर रोज कार्यकर्ताओं की बैठक और आमसभा के कार्यक्रम आयोजित हुए। आमसभाओं में १५ से २० हजार तक की संख्या में जनता उपस्थित रहती थी और ढाई से तीन घंटे तक एकाग्रता से जयप्रकाश नारायण के भाषण सुनती थी। जे० पी० ने अपने भाषणों में क्रान्ति के लिए हिंसा की व्यर्थता और कानून की सीमा का विश्लेषण करते हुए अहिंसक क्रान्ति के लिए जनअभिक्रम को अनिवार्य बताया। ग्रामदान की वैज्ञानिक और क्रान्तिकारी व्याख्या प्रस्तुत करते हुए आपने जनता से इस आन्दोलन में प्राणपण से जुट जाने की अपील की। सामाजिक क्रान्ति की शक्ति बनाने के लिए तरुणों का आह्वान करते हुए आपने तरुण शान्तिसेना के संगठन पर जोर दिया।०

पलामू जिलादान : आखिरी प्रखण्ड पूर्णता के करीब

पलामू जिले के २४ प्रखण्डों का प्रखण्डदान सम्पन्न हो गया है। आखिरी प्रखण्ड महुआटाँड़ मुख्य रूप से आदिवासी लोगों का है। प्रायः सभी ईसाई धर्म को स्वीकार कर चुके हैं। मिशनरी लोग १०० वर्षों से उनकी सेवा करते आ रहे हैं। प्रत्येक गाँव में गैर सरकारी स्कूल हैं। ८१ प्रतिशत लोग पढ़े-लिखे हैं। मिशनरी लोगों को चन्दे के रूप में प्रतिवर्ष ७५,००० रुपये इनसे मिलते हैं। उस पैसे का विनियोग शिक्षा तथा खेती की उन्नति के लिए किया जा रहा है। काम तो सरकारी प्रखण्ड विकास-योजना का भी हो रहा है, लेकिन दोनों का अध्ययन करके स्वयं बी० डी० ओ० साहब ने स्वीकार किया कि मिशनवालों के माध्यम से जो काम हो रहा है वह प्रशंसनीय है। मिशनरी लोगों के प्रति आदिवासियों में कितना विश्वास है, यह अनुभव स्वयं उनके बीच में जाकर ही किया जा सकता है। फादर तो उनके लिए धरती का देवता है। उनकी सलाह पर ही पूरा प्रखण्ड चलता है। इसी पृष्ठभूमि में ग्रामदान का विचार लेकर मुझे भी उस प्रखण्ड में जाना पड़ा। पहले से ऐसा विश्वास लोगों का बना हुआ था कि उन ईसाइयों के बीच ग्रामदान का विचार फैल नहीं सकेगा। मुझे जो अनुभव प्राप्त हुआ है उस बलपर मैं कह सकता हूँ कि यह विचार उनके जन-जीवन के बहुत अनुकूल है। यह उनके ग्रामीण नेता भी स्वीकार करने लगे हैं। हाँ उनके बीच काम करने के लिए अपने को गौण कर देना होता है और स्थानीय ग्रामीण कार्यकर्ता को अपना साथी बनाना पड़ता है। इस प्रखण्ड में सर्वश्री स्वामी सत्यानन्द, राजेन्द्र प्रसाद, रत्नेश्वर आदि प्रमुख कार्यकर्ता लगे हुए हैं। प्रखण्ड में १० पंचायत एवं १०३ गाँव हैं। प्रत्येक पंचायत से एक-एक ग्रामीण कार्यकर्ता लिये गये हैं। कुल मिलाकर २२ कार्यकर्ता लगे हुए हैं। शीघ्र ही प्रखण्डदान पूरा हो जाने की उम्मीद है। —कमल नारायण

राँची में अबतक चार प्रखण्डदान

राँची जिले में बाबा की १३ दिनों की यात्रा शुरू हो गयी है। पहला पड़ाव लोहरदगा में हुआ। स्थानीय रोमन कैथोलिक मिशन के हॉल में बाबा का स्वागत नागरिकों की ओर से किया गया और उन्हें लोहरदगा का प्रखण्डदान एवं १,६०१ रुपये की थैली समर्पित की गयी। स्वागत सभा की अध्यक्षता स्थानीय विधायक श्री बिहारी लकड़ा ने की। स्वागत समिति के मंत्री श्री नन्दलाल प्रसाद ने प्रखण्डदान समर्पित किया एवं स्वागताध्यक्ष श्री जगमोहन लाल गुप्त ने थैली समर्पित की। १६ तारीख को बाबा गुमला के लिए रवाना हो गये। अब तक राँची जिले में चार प्रखण्डदान हो चुके हैं, जिनके नाम हैं : बोलवा, बुण्डु, अंगारा, लोहरदगा। —कैलाश प्रसाद शर्मा

उत्तरप्रदेश में ग्रामदान

वाराणसी, १६ जुलाई। उत्तर प्रदेश के ४१ जिलों में जून के अंत तक कुल १८,७०६ ग्रामदान और ६७ प्रखण्डदान तथा २ जिलादान हुए हैं। सिर्फ जून में १,४५२ ग्रामदान और २ प्रखण्डदान नये हुए हैं। —कपिलभाई

विनोबाजी का इस माह का कार्यक्रम

२२ : बसिया, द्वारा—आदिमजाति सेवा मंडल, बसिया, राँची
२३ : खूँटी, द्वारा—खादीभण्डार, खूँटी, राँची
२६ : राँची, द्वारा—खादी भण्डार, राँची
२८ : रामगढ़, कैंट द्वारा—खादी भण्डार, रामगढ़कैंट, हजारीबाग
२९ : राँची, द्वारा—खादी भण्डार, राँची
१ अगस्त तक राँची।

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।